श्री चौसठऋद्धि पूजन विधान

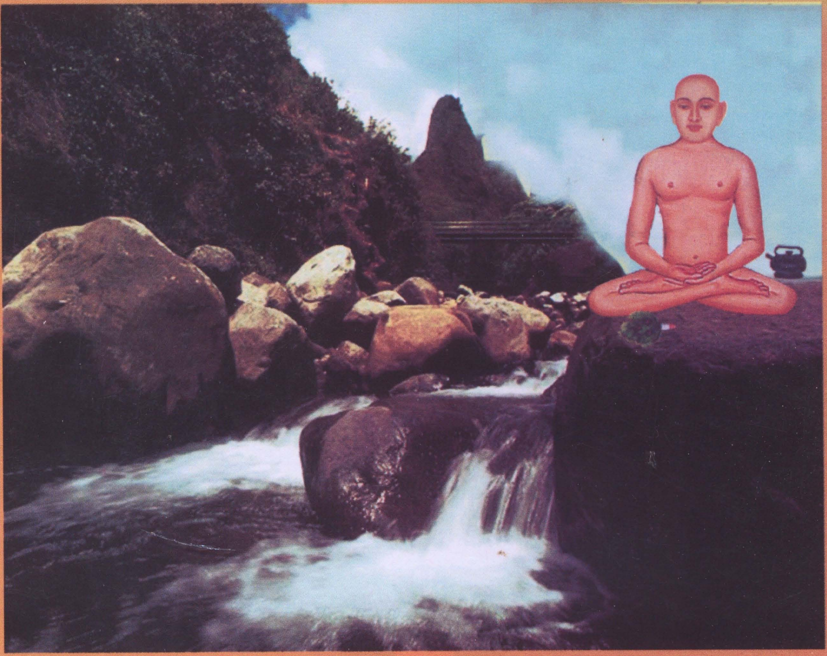

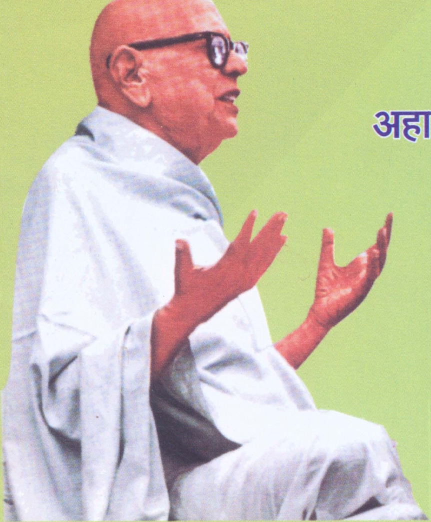

अहा ! धन्य यह मुनिदशा !

प्रकाशक :
श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमन्दिर ट्रस्ट
सोनगढ-364250

भगवानश्रीकुन्दकुन्द-कहानजैनशास्त्रमाला, पुष्प-२०९

कविश्री स्वरूपचन्दजी रचित

श्री
चौसठ-ऋद्धि पूजनविधान

* * *

प्रकाशक

श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमन्दिर ट्रस्ट

सोनगढ-३६४२५०

प्रथम संस्करण : २००० वि. सं. २०६२ ई. स. २००६

चौसठ-ऋद्धि पूजनविधानके
* स्थायी प्रकाशन पुरस्कर्ता *
श्री ज्ञानेश रसिकलाल शाह मेमोरियल ट्रस्ट, सुरेन्द्रनगर
ह. श्री रसिकलाल जगजीवनदास शाह-परिवार
श्रीमती पुष्पाबेन, कमलेशभाई, अजयभाई,
सौ. ज्योत्सनाबेन तथा सौ. कविताबेन.

मूल्य : रू. 10=00

मुद्रक :
कहान मुद्रणालय
जैन विद्यार्थी गृह कम्पाउन्ड, सोनगढ-३६४२५०
© : (02846) 244081

પરમ પૂજ્ય અધ્યાત્મમૂર્તિ સદ્‌ગુરુદેવ શ્રી કાનજીસ્વામી

प्रकाशकीय निवेदन

परमोपकारी स्वानुभूति विभूषित, अध्यात्मयुगस्रष्टा पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामीकी कल्याणवर्षिणी अनुभवरसभीनी वाणीसे मुमुक्षु समाजको तीर्थंकर भगवन्तों द्वारा प्रकाशित मोक्षमार्गके मूलरूप भवांतकारी सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रका यथार्थ बोध प्राप्त हुआ है। उनके द्वारा ही इस युगमें निज ज्ञायक स्वभावके आश्रयसे ही स्वानुभूतियुक्त सम्यग्दर्शन–निश्चय सम्यग्दर्शनकी प्राप्तिका मार्ग उजागर हुआ है।

तदुपरांत पूज्य गुरुदेवश्री द्वारा ही इस सम्यग्दर्शनकी प्राप्तिके उत्कृष्ट निमित्त सच्चे देव-गुरु-शास्त्रका भी यथार्थ ज्ञान मुमुक्षु समाजको प्राप्त होनेसे उनके प्रति आदर-भक्ति-बहुमानके भाव जागृत हुए हैं।

साथ साथ प्रशममूर्ति भगवती माता पूज्य बहिनश्रीने भी पूज्य गुरुदेवश्रीकी भवनाशिनी वाणीका हार्द मुमुक्षु समाजको बताकर मुमुक्षुओंके अंतरमें जागृत सच्चे देव-शास्त्र-गुरुके प्रतिके भक्तिभावको भक्ति-पूजाकी अनेकविध रोचक गतिविधियोंके द्वारा नवपल्लवित किया है।

जिसके फलस्वरूप सुवर्णपुरीमें देव-शास्त्र-गुरुकी भक्ति पूजनके विविध कार्यक्रमका आयोजन सदैव चलता रहता है। इस हेतुको ध्यानमें रखकर ट्रस्टकी ओरसे पूजनविधानके विविध पुस्तकोंका प्रकाशन हो रहा है।

महामुनिवरोंको तपके बलसे प्राप्त ६४ ऋद्धियोंकी भक्ति हेतु रचा गया 'श्री स्वरूपचंदजी रचित 'श्री चौसठ ऋद्धि मंडल विधान पूजा' पूर्व ''विधान पूजा संग्रह''में छपवाई गयी थी, यह पुस्तक उसका अलग संस्करण है। आशा है कि इस प्रकाशनसे मुमुक्षु समाज अवश्य लाभान्वित होगा।

पूज्य बहिनश्रीकी ९३वीं
जन्मजयंती महोत्सव
भादों वदी–२
वि. सं. २०६२

साहित्यप्रकाशन–समिति
श्री दि. जैन स्वाध्यायमन्दिर ट्रस्ट
सोनगढ ३६४२५०

❀

चौसठ-ऋद्धि-पूजन विधानका मंडल

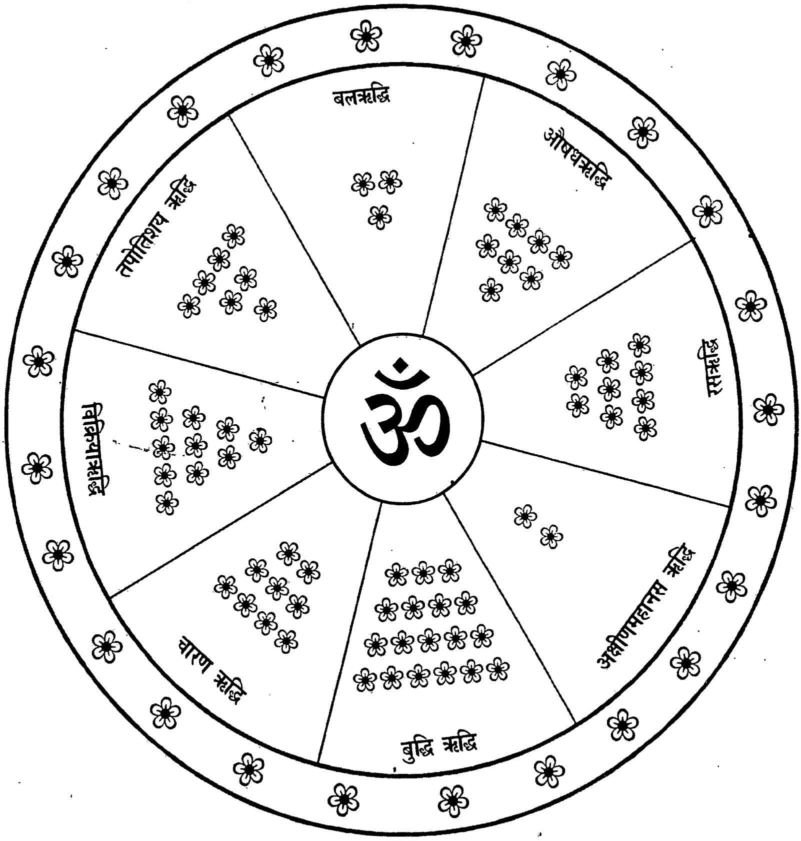
बलऋद्धि
औषधऋद्धि
रसऋद्धि
अक्षीणमहानस ऋद्धि
बुद्धि ऋद्धि
चारण ऋद्धि
विक्रियाऋद्धि
तपोतिशय ऋद्धि
ॐ

इसके चारों ओर २४ तीर्थंकरोंके संघके मुनिओंके अर्घ लिये हैं। इसके बाद चारों ओर आठ कोठे हैं। इनमें प्रथम बुद्धि ऋद्धिके १८, द्वितीय चारण ऋद्धिके ९, तृतीय विक्रियाऋद्धिके ११, चतुर्थ तपोतिशय ऋद्धिके ७, पंचम बलऋद्धिके ३, षष्ट औषधऋद्धिके ८, सप्तम रसऋद्धिके ९ और अष्टम अक्षीणमहानस ऋद्धिके २ कोठे बनाना चाहियें, और उनमें भिन्न-भिन्न उक्त ऋद्धि धारकोंके अर्घ चढ़ाना चाहिए।

ॐ

नमः सिद्धेभ्यः

श्री स्वरूपचन्दजी विरचित

चौसठ ऋद्धि पूजा

(बृहत् गुर्वावली पूजा)

(दोहा)

सारासार विचार करि, तजि संसृतिको भार।
धारा धरि निज ध्यान की, भये सिंधु भव पार ॥१॥

भूत भविष्यत कालके, वर्तमान ऋषिराज।
तिनके पदको नमन करि, पूज रचों शिव काज ॥२॥

स्तुति

(मदावलिप्तकपोल छन्द)

यह संसार असार दुःखमय जानि निरंतर,
विषय-भोग धन धान्य त्यागि सब भये दिगंबर।
परपरणति परिहार लगे निजपरणति मांहीं,
राग द्वेष मद मोह तणी नाहीं परछाहीं ॥३॥

जन्म जरा अरु मरण त्रिदोष जु या जग मांहीं,
सब जगवासी जीव भ्रमत कछु साता नाहीं।
इमि विचारि चितमांहिं धारि संयम अविकारी,
शुक्लध्यान धरि धीर वरी अविचल शिवनारी ॥४॥

षट्कायनिके जीवतणी करुणा प्रतिपालै,
करि चोरी परिहार मृषा वच सबही टालै।

ब्रह्मचर्य व्रत धर्यो परिग्रह द्विविध तज्यो जिन,
पंच महाव्रत धारि येह मुनि भये विचक्षन ॥५॥

चार हाथ भूं निरखि चलै हित मित वच भाखै,
षट्चालीस जु दोषरहित शुभ अशन जु चाखै।
भूमि शुद्ध प्रतिलेखि वस्तु क्षेपै रु उठावै,
भू निर्जन्तु निहारि मूत्र मल क्षपण करावै ॥६॥

स्पर्शन के हैं आठ पंच रस रसना केरे,
घ्राणेन्द्रिय के दोय चक्षु के पाँच गिनेरे।
कर्णेन्द्रिय के सप्तबीस अरु सात विषय सब,
इष्ट अनिष्ट जु मांहि करै नहिं राग द्वेष कब ॥७॥

सामायिक अरु वंदन स्तुति प्रतिक्रमण भजै हैं,
प्रत्याख्यान व्युत्सर्ग दिवस तिरकाल सजै हैं।
भूमिशयन अरु स्नानत्याग नग्नत्व धरै हैं,
कच लोंचैं दिन मांहिं एक वर अशन करै हैं ॥८॥
खडे होय करि अहार करै सब दोष टालि मित,
दंत-धवन तिन तज्यो देह जिय भिन्न लख्यो नित।
अष्टाविंशति ये जु मूलगुण धरत निरंतर,
उत्तर गुण लख च्यार असी धर वाह्य अभ्यंतर ॥९॥

(दोहा)

इत्यादिक बहु गुण सहित, अनागार ऋषिराज,
नमों नमों तिन पद कमल, तारण तरण जिहाज ॥१०॥

इति पठित्वा पुष्पांजलिं क्षिपेत्

⁂

अथ समुच्चय पूजा

(गीता छन्द)

॥ स्थापना ॥

संसार सकल असार जामें सारता कछु है नहीं,
धन धाम धरणी और गृहिणी त्यागि लीनी वन मही।
ऐसे दिगम्बर हो गये, अरु होयगें वरतत सदा,
इह थापि पूजों मन वचन करि देहु मंगल विधि तदा ॥१॥

ॐ ह्रीं भूतभविष्यतवर्तमानकालसम्बन्धि पुलाकादि पंचप्रकारसर्वमुनीश्वराः ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ, ठः ठः स्थापनम्, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(चाल रेखता)

लाय शुभ गंगजल भरिकै, कनक भृंगार धरि करिकै।
जन्म जर मृत्यु के हरनन, यजों मुनिराजके चरणन।

ॐ ह्रीं भूत-भविष्यत्-वर्तमानकाल-सम्बन्धि पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रंथ-स्नातक पंच प्रकार सर्वमुनीश्वरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०

घसों काश्मीर संग चंदन, मिलाओ केलिको नंदन।
करत भवतापको हरनन, यजों मुनिराजके चरणन॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्यत्-वर्तमानकाल-सम्बन्धि पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रंथ-स्नातक पंच प्रकार सर्वमुनीश्वरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं नि०

अक्षत शुभचंद्र के करसे, भरों कण थाल में सरसे।
अक्षय पद प्राप्तिके करणन, यजों मुनिराजके चरणन॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्यत्-वर्तमानकाल-सम्बन्धि पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रंथ-स्नातक पंच प्रकार सर्वमुनीश्वरेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि०

पुहुप ल्यो घ्राणके रंजन, उड़त तामांहिं मकरंदन।
मनोभव बाणके हरनन, यजों मुनिराजके चरणन॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्यत्-वर्तमानकाल-सम्बन्धि पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रंथ-स्नातक पंच प्रकार सर्वमुनीश्वरेभ्यो कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं नि०

लेय पक्वान्न बहु विधिके, भरों शुभ थाल सुवरणके।
असातावेदनी क्षुरणन, यजों मुनिराजके चरणन॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्यत्-वर्तमानकाल-सम्बन्धि पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रंथ-स्नातक पंच प्रकार सर्वमुनीश्वरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम् नि०

जगमगे दीप लेकरिकें, रकाबी स्वर्ण में धरिके।
मोहविध्वंस के करणन, यजों मुनिराजके चरणन॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्यत्-वर्तमानकाल-सम्बन्धि पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रंथ-स्नातक पंच प्रकार सर्वमुनीश्वरेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि०

अगर मलयागिरी चंदन, खेयकरि धूपके गंधन।
होय कर्माष्टको जरनन, यजों मुनिराजके चरणन॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्यत्-वर्तमानकाल-सम्बन्धि पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रंथ-स्नातक पंच प्रकार सर्वमुनीश्वरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं नि०

सिरीफल आदि फल ल्यायो, स्वर्णको थाल भरवायो।
होय शुभ मुक्ति को मिलनन, यजों मुनिराजके चरणन॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्यत्-वर्तमानकाल-सम्बन्धि पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रंथ-स्नातक पंच प्रकार सर्वमुनीश्वरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०

जलादिक द्रव्य मिलवाए, विविध वादित्र बजवाये।
अधिक उत्साह करि तनमें, चढावों अर्घ चरणनमें॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्यत्-वर्तमानकाल-सम्बन्धि पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रंथ-स्नातक पंच प्रकार सर्वमुनीश्वरेभ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घम् नि०

जयमाला

(सोरठा)

तारण तरण जिहाज, भव समुद्र के मांहि जे।
ऐसे श्री ऋषिराज, सुमरि सुमरि विनति करों॥१॥

(पद्धडि छन्द)

जयजयजय श्रीमुनि युगल पाय, मैं प्रणमों मन वच शीश नाय ।
ये सब असार संसार जान, सह त्यागि कियो आतम कल्याण ।।२।।
क्षेत्र वास्तु[1] अरु रत्न स्वर्ण, धन धान्य द्विपद अरु चतुकचर्ण ।
अरु कौप्य भांड दश बाह्य भेद, परिग्रह त्यागे नहिं रंच खेद ।।३।।
मिथ्यात्व तज्यो संसार मूल, पुनि हास्य अरति रति शोक शूल ।
भय सप्त जुगुप्सा स्त्रीय वेद, पुनि पुरुष वेद अरु क्लीव[2] वेद ।।४।।
अरु क्रोध मान माया रु लोभ, ये अंतरंग में करत क्षोभ ।
इमि ग्रंथ[3] सबै चौबीस येह, तजि भए दिगम्बर नग्न जेह ।।५।।
गुण मूल धारि तजि राग दोष, तप द्वादश धरि करि करत शोष ।
तृण कंचन महल मसान मित्त, अरु शत्रुनिमें समभाव चित्त ।।६।।
अरु मणि पाषाण समान जास, पर परणतिमें नहिं रंच वास ।
यह जीव देह लखि भिन्न भिन्न, जे निज-स्वरूपमें भाव किन्न ।।७।।
ग्रीषम ऋतु पर्वत शिखर वास, वर्षा में तरुतल है निवास ।
जे शीतकालमें करत ध्यान, तटनी तट चोहट शुद्ध थान ।।८।।
हो करुणासागर गुण अगार, मुझ देहि अखय सुखको भंडार ।
मैं शरण गहीं मुझ तार तार, मो निज स्वरूप द्यो बार बार ।।९।।

(धत्ता)

यह मुनिगुणमाला, परम रसाला, जो भविजन कंठै धरही ।
सब विघ्न विनाशहि, मंगल भासहि, मुक्ति रमा वह नर वरही ।।१०।।

ॐ ह्रीं भूत भविष्यतवर्त्तमानकालसम्बन्धि पुलाक वकुश कुशील निर्ग्रंथ स्नातक सर्वप्रकार मुनीश्वरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा ।

(दोहा)

सर्व मुनिनकी पूज यह, करै भव्य चित लाय ।
ऋद्धि सर्व घरमें बसै, विघ्न सबै नशि जाय ।।१।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

---

[1] मकान
[2] नपुंसक
[3] परिग्रह

चतुर्विंशतितीर्थंकरसम्बन्धिगणधरमुनीवर पूजा

॥ स्थापना ॥ (लक्ष्मीधरा छन्द)

वृषभसेनादि अस्सी चउ गणधरा,
वृषभके चउ-अंसी सहस सब मुनिवरा।
नीर गंधाक्षतं पुष्प चरु दीपकं,
धूप फल अर्घ ले हम यजे महर्षिकं ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथस्य वृषभसेनादि चौरासी गणधर एवं चौरासी हजार मुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

सिंहसेनादि सब नवति गणधार हैं,
अजित जिनराज के लक्ष अनगार हैं। नीर गंधाक्षतं० ॥२॥

ॐ ह्रीं अजितजिनस्य सिंहसेनादि नव्वे गणधर एवं एक लाख मुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

गणि चारुषेणादि शत एक अरु पांच हैं,
लक्ष सब दोय संभवतणेसांच हैं। नीर गंधाक्षतं० ॥३॥

ॐ ह्रीं संभवजिनस्य चारुषेणादि एकसौ पांच गणधर एवं दो लाख सर्वमुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

एकसौ तीन वज्रादि हैं गणधरा,
सर्व अभिनंद के तीन लक्ष मुनिवरा। नीर गंधाक्षतं० ॥४॥

ॐ ह्रीं अभिनंदनजिनस्य वज्रनाभि आदि एकसौ तीन गणधर एवं तीनलाख सर्व मुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

चामरादि एकशत षोडशा गणधरा,
सुमतियति चौगुणा सहस अस्सीपरा। नीर गंधाक्षतं० ॥५॥

ॐ ह्रीं सुमतिजिनस्य चामरादि एक सो सौलह गणधर एवं तीनलाख बीस हजार सर्व मुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

वज्रादि शत एक दस पद्मके गणधरा,
तीन लक्ष तीस हज्जार सब मुनिवरा। नीर गंधाक्षतं० ॥६॥

ॐ ह्रीं पद्मप्रभजिनस्य वज्रचामरादि ११० गणधर एवं तीनलाख तीस हजार सर्व मुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

चमरबल आदि पिच्चानवै गणधरा,
सुपार्श्व के तीन लक्ष सर्व योगीश्वरा।
नीर गंधाक्षतं पुष्प चरु दीपकं,
धूप फल अर्घ ले हम यजे महर्षिकं ॥७॥

ॐ ह्रीं सुपार्श्वजिनस्य चमरबल आदि पिच्चानवे गणधर एवं तीनलाख सर्वमुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

नवति अरु तीन दत्तादि गणराज हैं,
चन्द्र जिनके मुनि सार्द्धद्वय लाख हैं। नीर गंधाक्षतं० ॥८॥

ॐ ह्रीं चंद्रप्रभजिनस्य दत्तादि तिरानवे गणधर एवं अढाईलाख सर्वमुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

विदर्भादि गणराज अस्सी शुभ आठ हैं,
पुष्पदंत जिनतणे द्वय लक्ष साधु हैं। नीर गंधाक्षतं० ॥९॥

ॐ ह्रीं पुष्पदंतजिनस्य विदर्भादि अठासी गणधर एवं दो लाख सर्वमुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

इक–असी गणधरा आदि अनगार हैं,
लक्ष एक शीतलके और मुनिराज हैं। नीर गंधाक्षतं० ॥१०॥

ॐ ह्रीं शीतलनाथजिनस्य अनगार आदि इक्यासी गणधर एवं एक लाख सर्वमुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

कुंथादि गणराज सत्तर अरु सात हैं,
चउअसी सहस श्रेयांसके साध हैं। नीर गंधाक्षतं० ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं श्रेयांसजिनस्य कुंथादिसतत्तर गणधर एवं चौरासी हजार सर्वमुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

सुधर्मादि षट्षष्ठी वासुपूज्य गणधरे,
सहस बहत्तरे अवर मुनिवर सब फबै। नीर गंधाक्षतं० ॥१२॥

ॐ ह्रीं वासुपूज्यजिनस्य सुधर्मादिछियासठ गणधर एवं बहत्तरहजार सर्वमुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

गणी नंदरार्यादि पंच पच्चास हैं।
विमल मुनि सर्व अडसठि हज़ार हैं।
नीर गंधाक्षतं पुष्प चरु दीपकं,
धूप फल अर्घ ले हम यजे महर्षिकं ॥१३॥

ॐ ह्रीं विमलनाथजिनस्य नंदरार्यादि पचपन गणधर एवं अडसठ हजार सर्वमुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

गणधर जय आदि पच्चास जिनानंतके,
अवर मुनि षष्टिषट् सहस्र सब भंतके। नीर गंधाक्षतं० ॥१४॥

ॐ ह्रीं अनंतनाथजिनस्य जयादि पचास गणधर एवं छियासठ हजार सर्वमुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

अरिष्टादि चालीसत्रय सर्व गणधार हैं,
धर्म जिनके यती चउसठ हज़ार हैं। नीर गंधाक्षतं० ॥१५॥

ॐ ह्रीं धर्मनाथजिनस्य अरिष्टादि तियालीस गणधर एवं चौसठ हजार सर्वमुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

षडत्रिंश गणधरा चक्रायुधादि महा,
शांति जिनवर मुनि सहस बासठ लहा। नीर गंधाक्षतं० ॥१६॥

ॐ ह्रीं शांतिनाथजिनस्य चक्रायुधादि छत्तीस गणधर एवं बासठ हजार सर्वमुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

स्वयंभ्वादि गणराज पैंतिस जिन कुंथुके,
साठ हज़ार मुनिराज सब संघके। नीर गंधाक्षतं० ॥१७॥

ॐ ह्रीं कुंथुनाथजिनस्य स्वयंभ्वादि पैंतीस गणधर एवं साठ हजार सर्व मुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

तीस गणधार कुंथ्वादि अरनाथके,
सहस्र पंचास मुनिराज सब साथके। नीर गंधाक्षतं० ॥१८॥

ॐ ह्रीं अरनाथजिनस्य कुंथ्वादि तीस गणधर एवं पचास हजार सर्व मुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

विशाखादि गणराज आठ अरु बीस हैं,
मल्लिजिनके मुनी सहस चालीस हैं।
नीर गंधाक्षतं पुष्प चरु दीपकं,
धूप फल अर्घ ले हम यजे महर्षिकं ॥१९॥

ॐ ह्रीं मल्लिनाथजिनस्य विशाखादि अठाईस गणधर एवं चालीस हजार सर्व मुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

अष्टदश गणधरा मल्लि आदिक सदा,
मुनिसुव्रत तीस हज़ार मुनिवर तदा। नीर गंधाक्षतं० ॥२०॥

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतजिनस्य मल्यादि अठारह गणधर एवं तीस हजार सर्व मुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

सोमादि गणधर दश सप्त नमिनाथ के,
बीस हज़ार सब अवर मुनि साथके। नीर गंधाक्षतं० ॥२१॥

ॐ ह्रीं नमिनाथजिनस्य सोमादि सत्रह गणधर एवं बीस हजार सर्व मुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

आदि वरदत्त गणधार एकादशा,
नेमिके अवर मुनि सहस अष्टादशा। नीर गंधाक्षतं० ॥२२॥

ॐ ह्रीं नेमिनाथजिनस्य वरदत्तादि ग्यारह गणधर एवं अठारह हजार सर्व मुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

स्वयंभ्वादि गणधर दश अवर सब मुनिवरा,
पार्श्वजिनराज के सहस षोडश परा। नीर गंधाक्षतं० ॥२३॥

ॐ ह्रीं पार्श्वजिनस्य स्वयंभ्वादि दश गणधर एवं षोडश सहस्र सर्व मुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

गौतमादिक सबै एकदश गणधरा,
वीरजिनके मुनि सहस चउदस वरा। नीर गंधाक्षतं० ॥२४॥

ॐ ह्रीं महावीरजिनस्य गौतमादि ग्यारह गणधर एवं चौदह हजार सर्व मुनिवरेभ्योऽर्घ्यं० ।

(छप्पय छंद)

तीर्थंकर चौबीस सबनके गणधर सारे।
चौदहसै पच्चास और द्वय सर्व निहारे॥

अवर मुनीश्वर सर्व संघके सप्त प्रकार जु ।
लख अठबीस रु अधिक अष्टचालीस हजारसु ।।
इमि तीर्थेश्वर सकलके, सर्व मुनीश मिलाय ।*
अष्टद्रव्यकण थाल भरि, पूजों शीश नवाय ।।२५।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकराणां एक हजार चारसौ बावन गणधर एवं सप्त प्रकारीय अठाईस लाख, अड़तालीस हजार समस्त मुनिवरेभ्यो जलाद्यर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

◆

अथ मंडल प्रथम कोष्ठस्थ बुद्धि ऋद्धिधारक मुनि पूजा

।। स्थापना ।। (गीता छन्द)

बुद्धिऋद्धीश्वरा बुद्धिऋद्धीश्वरा,
अत्र आगच्छ आगच्छ तिष्ठो वरा ।
मम निकट, निकटहो, निकटहो, सर्वदा,
पूजिहों पूजिहों जोरि कर शर्मदा ।।

ॐ ह्रीं अष्टादश-बुद्धिऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरा ! अत्र अवतर अवतर ! संवौषट् आह्वानम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् । अत्र मम सन्निहितो भव भव सन्निधिकरणं ।

---

* यहाँ आदिपुराणके अनुसार गणधर एवं मुनियोंकी संख्या दी गई है । पूजाकी पुस्तकोंमें कई जगह अन्यथा आठ है, वह सही नहीं प्रतीत होता है ।

(चाल-द्यानतरायकृत अठाई पूजनकी)

(अष्टक)

प्रासुक जल शुभ लेय, कंचन-भृंग भरों।
त्रय धार चरण ढिग देय, कर्म-कलंक हरों॥
मैं बुद्धि-ऋद्धि धर धीर, मुनिवर पूज करों।
यातें हों ज्ञान गहीर, भव-संताप हरों॥

ॐ ह्रीं अष्टादश-बुद्धि-ऋद्धिधर-सर्वमुनीश्वरेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिरि चंदन लेय, कुंकुम संघ घसौं।
अर्चा कर श्री ऋषिराज, भव-आताप नसों। मैं बुद्धिऋद्धि० ॥

ॐ ह्रीं अष्टादश-बुद्धि-ऋद्धिधर-सर्वमुनीश्वरेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अखित अखंडित सार, मुनिचित से उजरे।
ले चन्द्रकिरण उनहार, चरणनि पुंज धरे। मैं बुद्धिऋद्धि०॥

ॐ ह्रीं अष्टादश-बुद्धि-ऋद्धिधर-सर्वमुनीश्वरेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमन सुमन मनहार, अधिक सुगन्ध भरे।
मन्मथके नाशनकार, ऋषिवर पाद धरे। मैं बुद्धिऋद्धि०॥

ॐ ह्रीं अष्टादश-बुद्धि-ऋद्धिधर-सर्वमुनीश्वरेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज विविध मनोज, मोदक थाल भरे।
ऋषिवरके चरण चढ़ाय, रोगक्षुधादि हरे॥ मैं बुद्धिऋद्धि० ॥

ॐ ह्रीं अष्टादश-बुद्धि-ऋद्धिधर-सर्वमुनीश्वरेभ्यो नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

ध्वांत-हरण शुभ ज्योति, दीपककी भारी।
ले ज्ञान उद्योतन कार, कणमय भरि थारी॥ मैं बुद्धिऋद्धि० ॥

ॐ ह्रीं अष्टादश-बुद्धि-ऋद्धिधर-सर्वमुनीश्वरेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

या धूप दशांग बनाय, हुताशनमें जारी।
भरि स्वर्णधुपायन मांहि, जरत सब करमारी॥ मैं बुद्धिऋद्धि० ॥

ॐ ह्रीं अष्टादश-बुद्धि-ऋद्धिधर-सर्वमुनीश्वरेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा

श्रीफल पूंग -बिदाम, खारिक मनहारी।
मैं मुक्ति मिलनके काज, चढाऊँ भरि थारी॥
मैं बुद्ध-ऋद्धि धर धीर, मुनिवर पूज करों।
यातें हों ज्ञान गहीर, भव-संताप हरों॥

ॐ ह्रीं अष्टादश-बुद्धि-ऋद्धिधर-सर्वमुनीश्वरेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सब द्रव्य अष्ट भरि थार, बहुविध तूर बजे।
करि गीत नृत्य उत्साह, हर्षित अर्घ सजे॥
श्री ऋषिवर चरण चढाय, फल यह मांगत हों।
मम बुद्धि ऋद्धि द्यो सार, जोरी कर याचत हों॥

ॐ ह्रीं अष्टादश-बुद्धि-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक पूजा

(दोहा)

अष्टादश बुद्धिऋद्धिके, धारक जे ऋषिराज।
तिन्हें अर्घ प्रत्येक करि, यजों बुद्धि के काज॥

ॐ ह्री अष्टादश-बुद्धि-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चाल टप्पा)

सकल द्रव्य पर्याय गुणनि करि समय एक लखवाई।
लोक अलोक चराचर जामें हस्तरेख समझाई।
मुनीश्वर पूजो हो भाई,
केवल बुद्धिऋद्धि-धार मुनीश्वर पूजो हो भाई॥१॥

ॐ ह्री केवल-बुद्धि-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ढाई द्वीपके सब जीवन की मनकी बात लखाई।
युगपत् एक कालमें जाने मनपर्यय ऋद्धि पाई॥
मुनीश्वर पूजो हो भाई, मनपर्यय ऋद्धिधार मुनीश्वर पूजो० ॥२॥

ॐ ह्रीं मनःपर्यय-बुद्धि-ऋद्धि-धारक सर्व मुनीश्वरेभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अविभागी पुद्गल परमाणु सो प्रत्यक्ष लखाई ।
अवधि बुद्धि ऋद्धि धार मुनीश्वर चरण कमल शिरनाई ।।
मुनीश्वर पूजो हो भाई, अवधि बुद्धि-ऋद्धिधार मुनीश्वर पूजो० ।।३।।

ॐ ह्रीं अवधि-बुद्धि-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कोष्ठ मांहि जो वस्तु भरी है मन वाञ्छित कढवाई ।
प्रश्न करत ही शब्द-अर्थमय शास्त्र सर्व रचवाई ।।
मुनीश्वर पूजो हो भाई, कोष्ठ बुद्धि-ऋद्धिधार मुनीश्वर पूजो० ।।४।।

ॐ ह्रीं कोष्ठ-बुद्धि-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

बीज बोय ज्यों भूमि मांहि कृषि बहुत धान्य निपजाई ।
बीज एक त्यों धारि चित्त ऋषि सर्वग्रंथ सुनवाई ।।
मुनीश्वर पूजो हो भाई, बीज बुद्धि-ऋद्धिधार मुनीश्वर पूजो० ।।५।।

ॐ ह्रीं बीज-बुद्धि-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

चक्रवर्त्तिकी सब सेनाके जीव अजीव रु तांई ।
युगपत् शब्द सुणै जो श्रवणन सब धारंण हो जाई ।।
मुनीश्वर पूजो हो भाई, संभिन्नश्रोत्र ऋद्धिधार ऋषीश्वर पूजो० ।।६।।

ॐ ह्रीं संभिन्न-श्रोतृ-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्व ग्रंथको एक पाद लखि दे सब ग्रंथ सुनाई ।
पादानुसारिणी ऋद्धि यही है याहिं धरैं मुनिराई ।।
मुनीश्वर पूजो हो भाई, पादानुसारिणी ऋद्धिधार मुनीश्वर पूजो० ।।७।।

ॐ ह्रीं पादानुसारिणी-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

नव योजनतैं बहुत अधिक को स्पर्शन बल अधिकाई ।
दूर स्पर्श ऋद्धिधार ऋषीश्वर चरण कमल लवलाई ।।
मुनीश्वर पूजो हो भाई, दूरस्पर्श-ऋद्धिधार ऋषीश्वर पूजो० ।।८।।

ॐ ह्रीं दूरस्पर्शन-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

3

नव योजनतैं अधिक स्वाद बल रसनेन्द्रिय में थाई।
दूरास्वादन ऋद्धिधार ऋषीश्वर चरणां शीष नमाई॥
मुनीश्वर पूजो हो भाई, दूरास्वाद ऋद्धिधार मुनीश्वर पूजो० ॥९॥

ॐ ह्रीं दूरास्वादन-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा !

नव योजनतैं बहुत अधिककी गंध नासिका जाई।
दूरगंध रिधिधार मुनीश्वर चरणां शीष नमाई॥
मुनीश्वर पूजो हो भाई, दूरगंधऋद्धिधार मुनीश्वर पूजो० ॥१०॥

ॐ ह्रीं दूरगंध-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहस सैंताल रु द्विशत तरेसठि योजनतें अधिकाई।
चक्षिंन्द्रिय बल अधिक अनूपम दूरदृष्टि ऋद्धि पाई॥
मुनीश्वर पूजो हो भाई, दूरावलोकन ऋद्धिधार मुनीश्वर पूजो० ॥११॥

ॐ ह्रीं दूरावलोकन-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादश योजन बहुत अधिक को शब्द श्रवण बल पाई।
दूर श्रवण ऋधिधर ऋषीवर के चरण कमल सिरनाई॥
मुनीश्वर पूजो हो भाई, दूर-श्रवण ऋद्धिधार मुनीश्वर पूजो० ॥१२॥

ॐ ह्रीं दूर श्रवण-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशम पूर्व हो सिद्ध तहां तब महाविद्या सब आई।
आज्ञा मांगे कार्य करन की मुनि तिनको नहिं चाही॥
मुनीश्वर पूजो हो भाई, दशं पूरब ऋद्धिधार मुनीश्वर पूजो० ॥१३॥

ॐ ह्रीं दशपूर्व-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौदह पूरव धारण होवे तप प्रभाव मुनिराई।
चौदह पूरवधारण समरथ मन वच तन सिर नाई॥
मुनीश्वर पूजो हो भाई, चौदह पूरव धारि मुनीश्वर पूजो० ॥१४॥

ॐ ह्रीं चतुर्दशपूर्व-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तरीक्ष अरु भोम अंग स्वर व्यंजन लक्षण ताई।
चिह्न स्वप्न अष्टांग-निमित लखि होनहार बतलाई॥
मुनीश्वर पूजो हो भाई, अष्टांग-निमित्त ऋधिधार मुनीश्वर पूजो० ॥१५॥

ॐ ह्रीं अष्टांग-निमित्त-बुद्धि-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बिना पढ़े ही जीवादिकके सकल भेद बतलाई।
चौदह पूरब ज्ञान धार सब भेद देय समझाई॥
मुनीश्वर पूजो हो भाई, प्रज्ञाश्रवण ऋधिधार मुनीश्वर पूजो० ॥१६॥

ॐ ह्रीं प्रज्ञाश्रवण-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर पदार्थतें आप भिन्न है जीव यहै लखवाई।
यातें दिगम्बर दृढ मुद्रा धरि परकी चाह मिटाई॥
मुनीश्वर पूजो हो भाई, प्रत्येक-बुद्धि-ऋद्धिधार मुनीश्वर पूजो० ॥१७॥

ॐ ह्रीं प्रत्येक-बुद्धि-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परवादी जब वाद करनको ऋषिवर सन्मुख आई।
स्यादवाद करि तिन वच खंडन विजय-ध्वजा फहराई॥
मुनीश्वर पूजो हो भाई, वादित्व ऋद्धिधर धीर मुनीश्वर पूजो० ॥१८॥

ॐ ह्रीं वादित्व-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवल ऋद्धिको आदि लेय बुद्धि ऋद्धि अष्टदश।
धारक तिनके नग्न दिगम्बर साधु सर्व दिश॥
समुचय अर्घ चढाय पूजहों सर्वदा।
सर्व विघ्न करि नाश बुद्धि द्यो शर्मदा॥

ॐ ह्रीं केवल-ऋद्ध्यादि-वादित्य-ऋद्धि-पर्यंत अष्टादश-बुद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

सर्व संघ मंगल करन, बुद्धिऋद्धि धरधीर।
मुनी तास थुति करत ही, बुद्धि शुद्ध हो वीर॥

(वेसरी)

प्रथम अंग आचार जु जानो, मुनि आचरण तासमें मानो।
सहस अठारह पद लखि यांके, परको त्यागि आप रंग राचे॥

सूत्रकृतांग अंग है दूजो, सूत्र अर्थ सामान्य जु बूजो।
पद छत्तीस हजार जु यांके, पढें मुनी सब अवयव तांके॥

स्थान अंग तीजो है यामें, सम स्थानन की संख्या जामें।
सहस बयाल पदनमें ये हैं, पढ़े मुनी तिन नमन करे हैं॥

समवाय अंग चौथो है यामें, सदृश पदारथ बरण्या जामें।
पद इक लख चउसठि हज्ज़ारं, पढें मुनी उतरें भव पारं॥

पंचम अंग व्याख्याप्रज्ञप्ती, तामें सप्त भंग विज्ञप्ति।
गणधर प्रश्न किये जो वरनन, पद लख दो अठवीस सहनन॥

ज्ञातृकथा अंग षष्ठम जानो, त्रिषष्ठि पुरुष को धर्म कथानो।
पांच लाख अरु छपन हजारं, पद सब पढें मुनीश्वर सारं॥

सप्तम अंग उपासकाध्ययनं, श्रावक धर्म तणों सब अयनं।
पद ग्यारह लख सतर हजारं, सो सब पढें मुनी अविकारं॥

अष्टम अंग अंतकृत दश है, तामें अंतकृतकेवलि जस है।
तेविस लख अडतीस हजारं, पाद पढ़े मुनिवर भवतारं॥

सह उपसर्ग अनुत्तर जननं, अनुतरपाद दशांगं नवमं।
बाणव लख चवचाल हज़ारं, पाठ पढ़ें मुनिवर सुखकारं॥

दशम अंग है प्रश्नव्याकरण, होनहार सब सुख दुख निरणं।
लाख तरेणव सोल हजारं, पाद पढ़ें मुनिवर जगतारं॥

विपाकसूत्र एकादश अंगं, कर्मविपाक रसादिक भंगं ।
पद इक कोड चौरासी लक्षं, ताको पढि मुनि भये विचक्षं ॥

अंग द्वादशमों दृष्टीवादं, पंच भेद ताके सब पादं ।
शत अठ कोडिरु अडसठ लक्षं, छपन हजार पांच सब दक्षं ॥

प्रथम भेद परिकर्मजु नामं, पंच प्रज्ञप्ति ग्रन्थ अभिरामं ।
चंद्र सूर्य जम्बूद्वीप सुव्यक्ति, द्वीपसमुद्र व्याख्याप्रज्ञप्ति ॥

इनके पद इक कोड इक्यासी, लाखहजार पांच है खासी ।
तिनमें सब इनको है रूपा, ये सब पढ़ें मुनीश्वर भूपा ॥

दूजो भेद सूत्र मरजादो, त्रिशत तरेसठि भेद कुवादी ।
लाख तरेसठि पद हैं याके, पढ़ें ताहि बंदो पद जाके ॥

प्रथमानुयोग तीजो वर भेदं, त्रिसठि शलाका पुरुष निवेदं ।
पाँच सहस पद याके जानो, पाप पुण्य फल सर्व पिछानो ॥

चौथो भेद पूर्वगत जामें, पूरव चौदह गर्भित तामें ।
कोडि पिचाणव लक्ष पचासं, अधिक पांच पद जानो तासं ॥

श्रुत संपति सब इनके मांहीं, धारण कर सब श्रुत अवगाही ।
जो मुनीश सब पूरव धारी, तिनकी महिमा अगम अपारी ॥

पंच भेद चूलिका जासा, जल थल माया रूप अकाशा ।
पद दशकोडि रु लख उणचासा, षट् चालीस सहस्र सब तासा ॥

इकसौ बारह कोडि पदावन, लाख तियासी सहस अठावन ।
पांच अधिक सब पद अंग तिनके, मुनिवर पढ़ें नमों पद तिनके ॥

इकावन कोडि रु लाख आठ तित, सहस चौरासी षट्शत परिमित ।
साढा इकविस श्लोक अनुष्टं, एक जु पदके भये स्पष्टं ॥

द्वादशांगमय रचना सारी, बुद्धि ऋद्धि में गर्भित भारी ।
तप प्रभाव ऐसी ऋद्धि धारी, तिन पद ढोक त्रिकाल हमारी ॥

(धत्ता)

यह जयमाला, परम रसाला, बुद्ध ऋद्धि धर गुणमाला ।
मुनिगण गुणमाला, हर जंजाला, बुद्धि विशाला करि भाला ।।

ॐ ह्रीं शुद्ध-बुद्धिं-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो जयमाला पूर्णाऽर्घ्यं नि० ।

(दोहा)

बुद्धि ऋद्धिधर मुनितणी, पूज करै जु सदीव ।
बुद्धि प्रचुर ताकै हृदय, परगट होय अतीव ।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

इति प्रथम कोष्ठ पूजा

अथ द्वितीयकोष्ठे चारणऋद्धिधारक मुनिवर पूजा

।। स्थापना ।। (अडिल्ल छंद)

क्रिया चारणी ऋद्धि भेद नव है सही ।
तिनके धारक सर्व मुनिश्वर हैं मही ।।
आह्वानन, संस्थापन, मम सन्निहित करों ।
मन वच तन करि शुद्ध वार त्रय उच्चरों ।।

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिधारकसर्वमुनीश्वरसमूह ! अत्रवतरावतर ! संवौषट् । आह्वानम्

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिधारकसर्वमुनीश्वरसमूह ! अत्र मम तिष्ठ तिष्ठ ! ठः ठः ! स्थापनम्

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिधारकसर्वमुनीश्वरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

अष्टक

(चाल—गोलेक्षणी, भांग तथा 'होली)

रत्न जड़ित भृंग भरि गंग-जल लायोजी।
जन्म मरण मेटिवेकों भाव सों चढायोजी॥
चारणऋद्धि धारी मुनि पूज करूंजी
पूजकरूं, पूजकरूं, पूजकरूंजी॥

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिधारकसर्वमुनीश्वरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व०

चंद-गंध को घसाय कुंकुमा मिलाई जी।
भवाताप मेटिबे को चरण चढाई जी॥ चारणऋद्धि०॥

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिधारकसर्वमुनीश्वरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनम् निर्व०

चन्द्र-किरण के समान श्वेत तंदुलौघ जी।
मुनीन्द्रचन्द्र चरण चोढ़ें होय सुख बोध जी॥ चारणऋद्धि०॥

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिधारकसर्वमुनीश्वरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तयेऽक्षतान् निर्व०

पुष्प गन्धतें मनोज्ञ घ्राण चक्षु हारी जी।
मुनीन्द्र-चन्द्र चरण पूजे होय मदन छारीजी॥ चारणऋद्धि०॥

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिधारकसर्वमुनीश्वरेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्व०

घेवर सुफेणिका मोदकादि चन्द्रिका जी।
रोग क्षुधा नष्ट होय चहोड़े पद मुनीन्द्रकाजी॥ चारणऋद्धि०॥

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिधारकसर्वमुनीश्वरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व०

दीपको उद्योत होत ध्वांत होय ना कदाजी।
मुनीन्द्र-चर्ण-ज्योति किये मोह-ध्वांत है बिदाजी॥ चारणऋद्धि०॥

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिधारकसर्वमुनीश्वरेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्व०

अगर तगर चूर चंदन गंध में मिलाया जी।
अग्नि संग खेय धूप क सब जराय जी॥ चारणऋद्धि०॥

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिधारकसर्वमुनीश्वरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व०

सुष्ट मिष्ट श्रीफलादि हिरण्य थाल भरों जी।
श्री मुनीन्द्र चरण चहोडि मुक्ति अंगना वरोजी॥
चारणऋद्धि धारी मुनि पूज करूंजी
पूजकरूं, पूजकरूं, पूजकरूंजी॥

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिधारकसर्वमुनीश्वरेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्व०

जलादि द्रव्य लेय हेम थालमें भरें जी।
श्रीमुनीन्द्र-चरण चहोडि सर्व ऐनको हरें जी॥ चारणऋद्धि०॥

ॐ ह्रीं चारणऋद्धिधारकसर्वमुनीश्वरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ प्रत्येक पूजा

(सोरठा)

क्रियाचारण नव भेद, ऋद्धि धार जे हैं मुनी।
जुदे जुदे निरखेद, पूजों अर्घ चढ़ायके॥

ॐ ह्रीं नव भेद क्रियाचारणऋद्धिधारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(चाल छन्द)

जल ऊपर थलवत् चाले, जल-जन्तु एक नहिं हालै।
जल चारण मुनिवर जे हैं, तिन पद पूजें शिव ले हैं॥१॥

ॐ ह्रीं जलचारण ऋद्धिधारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरती से अंगुल च्यारै, ऊंचो तिनको सुविहारै।
क्षण में बहु योजन जै हैं जंघाचारण पूजै हैं॥२॥

ॐ ह्रीं जंघाचारण ऋद्धिधारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मकड़ी-तंतूपर चाले, सो तंतु टूटै नहिं हालै।
ते तंतूचारण ऋधिधर, तिन पूजैतें हो शिव-वर॥३॥

ॐ ह्रीं तंतूचारण ऋद्धिधारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पन परि गमन कराही, पुष्प-जीवन बाधा नाहीं।
मुनि चारण-पुष्प वही है, तिन पूजें मुक्ति लही है ॥४॥

ॐ ह्रीं पुष्पचारण ऋद्धि प्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पत्रन परि गमन करंता, पत्र-जीव बाध नहिं रंचा।
यह पत्रचारण मुनि पूजें, तिनतें सब पातक धूजें ॥५॥

ॐ ह्रीं पत्रचारण ऋद्धि प्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

बीजन परि मुनि विचराहीं, बीज-जीवसु बाधा नाहीं।
जे चारण बीज-ऋषीश्वर, तिन पूजैं है अवनीश्वर ॥६॥

ॐ ह्रीं बीजचारण ऋद्धि प्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रेणीवत् गमन करंता, सब जीवजाति रक्षंता।
श्रेणी चारण ते कहिए, पूजैं मनवांछित पइये ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रेणीचारण ऋद्धि प्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जे अग्नि शिखापर चालै, सो अग्नि शिखा नहिं हालै।
ते अग्निचारण मुनि पूजैं, तिनको शिव-मारग सूझै ॥८॥

ॐ ह्रीं अग्निचारण ऋद्धि प्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पालै आज्ञा जिनशासन, कायोत्सर्गादिक आसन—
धरि, गमन करें नभ मांहीं, नभचारण पूज कराहीं ॥९॥

ॐ ह्रीं नभश्चारणऋद्धि प्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(सोरठा)

जलचारणतें आदि, भेद क्रिया ऋधिके सकल।
धारक तिन ऋषिपाद, मन वच तन पूजो सदा ॥

ॐ ह्रीं नव-भेद-क्रियाचारण-ऋद्धि-प्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्व०

जयमाला

(अडिल्ल छन्द)

चारण ऋधिके धार मुनीश भए तिन्हें ।
मन वच तन करि शुद्ध नमन करिहों जिन्हें ।।
जीवभेद षट् काय अभय सबको दियो ।
तिनके तनतै विना यतन ही सिध भयो ।।१।।

(चाल-पनिहारी)

पृथ्वी अरु अप तेजकी सब जाणी हो, वायुकायकी जाति, मुनिवरजी ।
नित्य रु इतर निगोद की सब जाणी हो, सात २ लाख जाति, मुनि० ।२।
वनस्पतिकी लाख दस सब जाणी हो, विकलत्रयकी दो २ लाख मुनि० ।
पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चकी सब जाणी हो, देव नारकी चव २ लाख मुनि० ।३।
चौदह लाख मनुष्य की जब जाणी हो, ये योनि चौरासी लाख, मुनि० ।
इकसौ साढा निन्याणवे सब जाणी हो, लाखकोडिकुल भाख, मुनि० ।४।
इन्द्रिय पंच जु च्यार गति सब जाणी हो, षट् काय पंद्रहयोग, मुनि० ।
वेद तीन द्रव्य भावतें सब जाण्या हो, कषाय पचीस को थोक, मुनि० ।५।
ज्ञान आठमें भेद दो वह जाण्या हो, सम्यक् अरु कुज्ञान, मुनिवरजी ।
संयम सात रु दर्श चउ सब जाण्या हो , लेश्या षट् पहिचान, मुनि० ।६।
भव्य दोय सम्यक्त्व छह जाणी हो, संज्ञी उभय बखानि, मुनिवर० ।
अहारक युग सब जीवके सो जाण्या हो, मार्गण चौदह जाणि, मुनि० ।७।
गुणस्थान चउदश सकल सब जाण्या हो, चौदह जीवसमास, मुनि०
पर्याप्त षट् भेद युत सब जाण्या हो, प्राण जु दश है तास, मुनि० ।८।
संज्ञा चार जु जीवके सब जाणी हो, है बारह उपयोग मुनि० ।
बीस प्ररुपणातैं सकल श्री ऋषिवरजी, जाण्यो जीव प्रयोग, मुनि० ।९।
इनतें जहँ जहँ जीव हैं श्री मुनिवरजी, त्रस थावर दो भांति जाण्या हो० ।
सूक्ष्म बादर भेद युत सब जाणी हो, संसार की जाति, मुनि० ।१०।

सबै जानि आगम गमन सब करतजी सम्यक् धर निजभाव, मुनि०
पालै करुणा सबन की श्रीमुनिवरजी, जीव जाति कर चाव, मुनि० ।११।
चारण ऋद्धिके होत ही करुणा प्रतिपालै, पृथ्वी धरत न पांव, मुनि० ।
तातें जिनकी देहतें श्रीमुनिवरके, रंच न हिंसा भाव, मुनिवरजी ।१२।
चारण मुनिके गुणनिको धी तुछ धारी हो, कोलौं करै बखान, मुनि० ।
सहसजीभतें इन्द्र भी मुनिवरको नहिं कर सकै बखान, मुनि० ।१३।
अब मेरी यह विनति श्रीमुनिवरजी, सुन लीज्यो ऋषिराज, सारीजी० ।
जोलौं शिव पाऊँ नहीं मुनिवरजी, तोलौं दरश दिखाय, यतिवरजी ।१४।

(सोरठा)

जो यह पढै त्रिकाल, गुणमाला ऋषिराजकी ।
हो वह भवदधि पार, मुनिस्वरूप को ध्यान करि ।।१५।।

ॐ ह्रीं चारण-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(छप्पय)

चारण मुनिकी पूज करैं इहि विधि भवि प्राणी ।
सकल विघन को नाश होय मंगल सु निधानी ।।
ऋद्धि वृद्धि बहु होय तासके गृहके मांहीं ।
पुत्र पौत्र सुख बढै और परिणय सुखदाई ।
मन वचन काय पूजा करत, पाप सकलको नाश फिर ।
भरत पुण्य भण्डार बहु, मुनि प्रसादतें तास घर ।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

(इति द्वितीय कोष्ठ पूजा)

◆

अथ तृतीयकोष्ठे विक्रियाऋद्धिधर मुनि पूजा

॥ स्थापना ॥ (चाल चौपाई रूपक)

सब जीवनके सुखके कंदा, विक्रिय ऋद्धिके धार मुनींदा।
थापों पूजन काज सदीवा, मन वांछित फल दाय अतीवा॥

ॐ ह्रीं विक्रिया-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वर ! अत्रावतराबतर ! संवौषट्। आह्वानम्

ॐ ह्रीं विक्रिया-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वर ! अत्र मम तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । स्थापनम्

ॐ ह्रीं विक्रिया-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वर ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक

(चाल-आवंत नीड़ो काल वरज्यो ना रह्यो)

कमल सुवासित परिमल गंधित गंगादिक जल सार।
निर्गत रत्नभृंग त्रय धारा जन्म जरा मृति हार।
मुनीश्वर पूजत हों मैं विक्रय ऋद्धिके धार मुनीश्वर पूजत हों॥

ॐ ह्रीं विक्रिया-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्यो ! जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०

मलयागिरि चन्दन घसि केसर और मिला घनसार।
भव संताप हरनके कारण अरचों बारम्बार। मुनी०।

ॐ ह्रीं विक्रिया-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्यो ! संसारतापविनाशनाय चंदनं नि०

कमल शालिके अखित अखण्डित मुक्ता सम अविकार।
अखय अखण्डित सुखकारण भरि कनक रतनमय थार। मुनी०।

ॐ ह्रीं विक्रिया-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्यो ! अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि०

अमर तरु अरु कल्प बेलिके पुष्प सुगन्ध अपार।
मनमथ भंजन कारण अरचों भर कञ्चन शुभ थार। मुनी०।

ॐ ह्रीं विक्रिया-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्यो ! कामबाणविनाशनाय पुष्पं नि०

पिंड सुधामय मोदक उज्ज्वल दिव्य सुगन्ध रसाल।
स्वर्णथाल भरि चरण चढाये होत क्षुधा निरवार।
मुनीश्वर पूजत हों मैं विक्रय ऋद्धिके धार मुनीश्वर पूजत हों॥
ॐ ह्रीं विक्रिया-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्यो ! क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०

जगमग जगमग ज्योति करत है दीप शिखा तमहार।
मोह विध्वंशन ज्ञान उद्योतक आर्तिक चरण उतार॥ मुनी०॥
ॐ ह्रीं विक्रिया-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्यो ! मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि०

कृष्णागरु मलयागिरि चन्दन-धूप अग्नि संग जार।
कर्म-धूम्र उडि दश दिश धावे भ्रमर करत गुञ्जार॥ मुनी०॥
ॐ ह्रीं विक्रिया-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्यो ! अष्टकर्मदहनाय धूपं नि०

श्रीफल लोंग बिदाम सुपारी एला–फल सहकार।
सुवरण थाल भराय यजत ही होय मुक्ति भरतार॥ मुनी०॥
ॐ ह्रीं विक्रिया-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्यो ! मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०

जल गन्धाक्षत पुष्प जु नेवज दीप धूप फल सार।
स्वर्णथाल भरि अर्घ चढावों करि जय जय जयकार॥ मुनी०॥
ॐ ह्रीं विक्रिया-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्यो ! अनर्घपदप्राप्तये अर्घम् नि०

प्रत्येक पूजा

(दोहा)

विक्रय ऋद्धिके एकदस, भेद धार ऋषिराज।
भिन्न भिन्न तिन अर्घ दे, पूजों शिव हित काज॥
ॐ ह्री विक्रिया-ऋद्धि-धारक एकादशभेदसहितसर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्व०

(चाल अठाई पूजनकी)

कमल-तन्तु पर जो जो निवसै निराबाध तिष्ठाई।
अणु समान काया हो जावै यह अणिमा ऋद्धि पाई॥
मुनीश्वर पूजों अर्घ चढाई, जो विक्रियाऋद्धि शुभ पाई॥१॥
ॐ ह्रीं अणिमा-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्रवर्ती-संपत्ति निपजावे, योजन लाख ऊँचाई।
निज शरीरकी क्षणमें करत है, वह महिमा ऋद्धि गाई।
मुनीश्वर पूजों अर्घ चढाई, जो विक्रियाऋद्धि शुभ पाई ॥२॥

ॐ ह्रीं महिमा-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

काय बडी दीखत सब जनको, अर्कतूल हलकाई।
ऐसी ऋद्धि उपजत मुनिवरको, सो लघिमा जु कहाई ॥ मुनी० ॥ ३॥

ॐ ह्रीं लघिमा-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

शरीर सूक्ष्म सब जनको दीखै, इन्द्रादिक मिल आई।
जिनतें हले चले नहिं कबहूं, यह गरिमा ऋद्धि पाई ॥ मुनी० ॥४॥

ॐ ह्रीं गरिमा-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पृथ्वी ऊपर तिष्ठै मुनिवर, मेरु-शिखर स्पर्शाई।
चन्द्र सूर्य ग्रह अंगुली धारें, प्राप्ति-ऋद्धि कर भाई ॥ मुनी० ॥५॥

ॐ ह्रीं प्राप्ति-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनेक प्रकार शरीर बनावें, पृथ्वी में धसि जाई।
भूमि मांहि चुभकी जलवत् ले, ऋद्धि प्राकाम्य कहाई ॥ मुनी ० ॥६॥

ॐ ह्रीं प्राकाम्य-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तप बल मुनीश्वर के सब होवे, तीन लोक ठकुराई।
इन्द्रादिक सब शीष नमावे, ईशत्व ऋद्धि उपजाई ॥ मुनीश्वर० ॥७॥

ॐ ह्रीं ईशत्व-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तीन लोक जिनके दर्शनतें, देखत वशि हो जाई।
सबके बल्लभ गुणके दाता ये वशित्व ऋद्धि पाई ॥ मुनीश्वर० ॥८॥

ॐ ह्रीं वशित्व-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पर्वत भेद निकसि वे जावें, छिद्र न हो ता मांहीं।
रुकें नहीं काहू से मुनिवर, अप्रतिघात ऋद्धि पाई ॥ मुनीश्वर० ॥९॥

ॐ ह्रीं अप्रतिघात-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

देखत सबके प्रछन्न होवें, काहूके दृष्टि न आई।
अन्तर्धानऋद्धि है ये ही, तप बल पर प्रगटाई॥
मुनीश्वर पूजों अर्घ चढाई, जो विक्रियाऋद्धि शुभ पाई॥१०॥

ॐ ह्रीं अन्तर्धान-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनवांछित सो रूप बनावे, जो होवे मन मांहीं।
कामरूपिणी ऋद्धि यही है, तप बल यह उपजाई॥ मुनीश्वर०॥११॥

ॐ ह्रीं कामरूपिणी-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

तप महात्म्यतें येह, विक्रियऋद्धि उपजी जिन्हें।
मन वांछित फल लेह, पूजें ध्यावें जो तिन्है॥

ॐ ह्रीं अणिमाआदि कामरूपिणीपर्यन्त विक्रिया-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(गीता छन्द)

वज्रधर अरु चक्रधर अरु धरणिधर विद्याधरा।
तिरशूल धर अरु काम हलधर शीषि चरणनि तल धरा॥
ऐसे ऋषीश्वर ऋद्धि विक्रियधरी तिनके पदकमल—
पूजों सदा मन वचन तन करि हरो मेरे कर्म-मल॥

(ढाल त्रिभुवन गुरु की)

संसार असाराजी, मिथ्यात्व अंधाराजी।
यामें दुख भारा, चतुर्गतिके विषेंजी॥२॥

नरकनिके माहींजी, कहुँ साता नाहींजी।
सागर बहु तांई, दुख भुगत्या घणाजी॥३॥

तिर्यञ्च गति धारीजी, पशुकाया सारीजी।
तामें दुख भारी, भूख तृषा तणीजी॥४॥

कोई लादे बांधेजी, धरि जूडा कांधेजी।
बहु मारै अरु रांधै, निर्दय नर घणाजी ॥५॥
मानुष भव मांहींजी, सुख है छिन नांहींजी।
सबकूं दुखदाई, गर्भज वेदनाजी ॥६॥
बालक वय मांहींजी, कछु ज्ञानहु नांहींजी।
पाई फिर तरुणाई, विषयचिंता घणीजी ॥७॥
बहु इष्टवियोगाजी, अरु अशुभ संयोगाजी।
तामें दुख भुगते, क्षण समता नांहींजी ॥८॥
तीजो पन आयोजी, बहु रोग सतायोजी।
इह विधि दुख पायो, मानुषभवमें सहीजी ॥९॥
सुरपदवी मांहींजी, माला मुरझाई जी।
चिन्ता दुखदाई, भेगी मरणकीजी ॥१०॥
ई विधि संसाराजी, ताको नहिं पाराजी।
यह जाण असारा, त्यागि मुनी भएजी ॥११॥
गृह–भोग विनश्वरजी, जाणै योगी वरजी।
पद त्याग अवनीश्वर, लीनी वनमहीजी ॥१२॥
तप बहुविध कीन्होजी, निज आतम चीन्होजी।
सकलागम भीनो, मुनिपद जे धरेंजी ॥१३॥
बहु ऋद्धिको धारेंजी, नहिं कारिज सारेंजी।
आतमगुण पालें निज काजकोजी ॥१४॥
विक्रियऋद्धिधारीजी, मुनिवर अविकारीजी।
तिनके गुण भारी, कहांलों वरणऊँजी ॥१५॥
ऐसे मुनिवरकोजी, कब ह्वै हम औसरजी।
धनि धनि वह द्यौसर, मुनि मोको मिलेजी ॥१६॥
तिनके पदकी रजजी, धरि हैं शुभ शीर्षजजी।
तबही हम कारज, बहुविधि के सरेंजी ॥१७॥

हम शरण तिहारीजी, भव भव सुखकारीजी ।
तातें हम धारी भक्ति हिरदा विषेंजी ॥१८॥

(दोहा)

विक्रियऋद्धिधर मुनिनकी, कंठ धरै गुणमाल ।
मुनिस्वरूप को ध्यायकै, होवै बुद्धि विशाल ॥१९॥

ॐ ह्रीं विक्रिया ऋद्धिप्राप्त सर्व मुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(सोरठा)

होय विघन सब नाश, मंगल नितप्रति हो सदा ।
होय ऋद्धि परकाश, पूजन जो या विधि करै ॥

इत्याशीर्वादः ।

(इति तृतीय कोष्ठ पूजा)

अथ चतुर्थकोष्ठस्थतपोतिशयऋद्धिप्राप्त ऋषीश्वर पूजा

॥ स्थापना ॥ (अडिल्ल छंद)

तपऋधि धारक मुनी जहां तिष्टै सही।
मरी आदि सब रोग तहां कछु हो नहीं॥
जातिविरोधी जीव बैर सबही तजैं।
शांति प्रवर्तन काज थापि हमहू यजै॥

ॐ ह्रीं तपोतिशयऋद्धिसहितसर्वमुनीश्वरसमूह ! अत्रावतरावतर । संवौषट् आह्वानम्
ॐ ह्रीं तपोतिशयऋद्धिसहितसर्वमुनीश्वरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ! ठः ठः । स्थापनम्
ॐ ह्रीं तपोतिशयऋद्धिसहितसर्वमुनीश्वरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निकणम् ।

अष्टक

(त्रिभंगी छन्द)

निर्मल शुभ नीरं गंध गहीरं, प्रासुक सीरं ले आया।
भरि कंचनझारी, धार उतारी, जन्म मृत्युहारी पद ध्याया॥
तपऋद्धिके स्वामी, शिवपद-गामी, शान्ति-करामी तिम ध्यावें।
करि विघन विनाशं मंगलभासं, हरि भव त्रासं गुण गावें॥

ॐ ह्रीं तपोतिशयऋद्धिसहित सर्वमुनीश्वरेभ्यो जलम् निर्वपामीति स्वाहा ।

मलय सुचन्दन, कदली नन्दन, भव-तप भंजन कों लाया।
तुम चरण चढामी, शिवसुखगामी, गुणधामी पूजन आया। ॥तप०॥

ॐ ह्रीं तपोतिशयऋद्धिप्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्यो चन्दनम् निर्वपामीति स्वाहा ।

सित सालि अखंडित, सौरभ मंडित, चन्द्र-किरण से अनियारी।
भूपनको मौसर, हम इह औसर, पूज करों शिव-पदकारी॥तप०॥

ॐ ह्रीं तपोतिशयऋद्धिप्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

गुञ्जत बहु भृंगं, पुष्पसुगन्धं कल्पवृक्ष के शुभ ल्यायो ।
हरिवाण मनोजं, पद अंभोजं, पूजन कारन मैं आयो ।।
तपऋद्धिके स्वामी, शिवपद-गामी, शान्ति-करामी तिम ध्यावें ।
करि विघन विनाशं मंगलभासं, हरि भव त्रासं गुण गावें ।।

ॐ ह्रीं तपोतिशयऋद्धिप्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

घेवर बावर, फेणी मोदक, चन्द्रक सुवरण थाल भरे ।
रसनाके रंजन, रसके पूरे, पूजत रोग क्षुधादि हरे ।।तप०।।

ॐ ह्रीं तपोतिशयऋद्धिप्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कनक रकाबी में मणिदीपक, ललित ज्योति करि अति प्यारे ।
मोह-तिमिर विध्वंसन कारण, चरण-कमल पर हम वारे ।।तप०।।

ॐ ह्रीं तपोतिशयऋद्धिप्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अगर तगर मलयागिरि चन्दन, केलीनन्दन धूप करी ।
स्वर्ण धुपायन संग हुताशन, खेवत भाजै कर्म-अरी ।।तप०।।

ॐ ह्रीं तपोतिशयऋद्धिप्राप्तसर्वमुनीश्वरेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुष्ठु मिष्ठ बादाम जायफल दाख पूग श्रीफल भारी ।
एला आदि फलनितें पूजों मुक्ति मिलावन भरि थारी ।।तप०।।

ॐ ह्रीं तपोतिशयऋद्धिप्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वच्छ नीर मलयागिरि चन्दन, अखित पुष्प नेवज भारी ।
दीप धूप फल स्वर्णथाल भरि अर्घ चढावो सुखकारी ।।तप० ।।

ॐ ह्रीं तपोतिशय-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ प्रत्येक पूजा

(दोहा)

तपऋद्धिधर तपत नित, टरत उपद्रव-वृन्द ।
षट् ऋतु तरुवर फल फलत, अरचत सकल नरिन्द ।।

ॐ ह्रीं तपोतिशय-ऋद्धि-प्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(चाल-आओजी आओ सब मिल जिन चैत्यालय चालां)

एक वास करि घटै नहीं फिर अधिक अधिक विस्तारै।
येही जी उग्रतपोऋद्धि-धारक मुनि भव तारै, राज ॥
आओजी आओ सब मिल मुनिवर पूजन चालां।
मुनिजी के दर्शन-जलतें कर्म-कलंक पखालां, राज ॥आओ०॥१॥

ॐ ह्रीं उग्रतपोतिशय-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुत वास करि खीण भयो तन अधिक दीप्तता धारै।
ये ही जी दीप्ततपोऋद्धि मुख सुगन्ध विस्तारै, राज ।आओ०॥२॥

ॐ ह्रीं दीप्ततपातिशयऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अहार करत नीहार होत नहिं शुष्क भये तन मांहीं।
ये ही जो तप्ततपोंऋद्धि धारक मुनि अरचाहीं, राज ।आओ०॥३॥

ॐ ह्रीं तप्ततपोतिशयऋद्धि-प्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मति श्रुत अवधि ज्ञान कर सूक्षम त्रसनाडी के मांही।
जानैं सबहु भाव जीवके महातपोऋद्धि याही, राज ॥आओ०॥४॥

ॐ ह्रीं महातपोतिशय-ऋद्धि-प्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रोग व्यथा उपजत मुनिजन तो उपवासादि कराई।
चिगैं नहीं तपध्यान संयमतैं घोर तपोऋद्धि याही, राज ॥आओ०॥५॥

ॐ ह्रीं घोर तपोतिशय-ऋद्धि प्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घोर पराक्रमऋद्धिके धारक तिनको दुष्ट सतावे।
ता कारणतें सर्व देशमें मरी आदि भय आवै, राज ॥आओ०॥६॥

ॐ ह्रीं घोर पराक्रम-तपोतिशय-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्व०

गुण अघोरब्रह्मचर्यधार मुनि तिष्ठत जहाँ सुखदाई।
मरी आदि सब रोग मिटत तहँ ऋद्धि-वृद्धि अधिकाई, राज ॥आओ०॥७॥

ॐ ह्रीं अघोर ब्रह्मचर्य-तपोतिशय-ऋद्धि-प्राप्त-सर्व-मुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

उग्रतपादिकऋद्धि, ब्रह्मचर्यलों सात सब ।
धारक मुनी समृद्ध, पूजों अर्घ चढायकै ।।

ॐ ह्रीं उग्रतपोतिशयादि अघोरब्रह्मचर्यान्तसप्त-तपोतिशय-ऋद्धि-प्राप्त-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(दोहा)

तपोऋद्धिधारक मुनी, भये सकल गुणपाल ।
तिनकी थुति मैं करत हों, गूंथि गुणनकी माल ।।

(चाल आगमकी)

कर्म निर्जरा करनको संवर करि शिव-सुखदाई जी ।
बाह्य अभ्यन्तर तप करै द्वादश विधि हों हरषाई जी ।।
तपऋद्धि धारक जे मुनि बन्दौं तिन शीष नवाई जी ।।१।।

षष्टम अष्टम आदि दे उपवास करै षट् मासा जी ।
अनशन तप इहि विधि धरै छांडे सब तन की आशाजी । तप० ।।२।।

बत्तीस ग्रास भोजन-तणों तिनमें घटि घटि लेय आहारो जी ।
ऊनोदर तपको करै मम अशुभ कर्म निरवारो जी ।।तप०।।३।।

वृत्ति अटपटी धारिकै भोजन करि है अविकारो जी ।
व्रतपरिसंख्या तप तणी विधि धारि करै विस्तारो जी ।।तप०।।४।।

षट्रस मय-भोजन विषैं रस त्यागि लेत आहारो जी ।
रस-परित्याग जु तप करैं मौकूं भव-सागरतैं त्यारोजी ।।तप०।।५।।

ग्राम पशु जन नहिं तहां पर्वत बन नदी-किनारो जी ।
शून्य गुफामें जे रहें विविक्तशय्यासन धारो जी ।।तप० ।।६।।
ग्रीष्मऋतु पर्वत-शिखरपै वर्षा में तरुतल ध्यानो जी ।
शीत नदी-तट चोहटे, तप कायकलेश महानो जी ।।तप०।।७।।

बाहिज षट् विधि तप यही, सब कर्म निर्जरा थानो जी।
आभ्यन्तर तप भेदतें, धारत पद ह्वै निरवाणो जी।
तपऋद्धिधारक जे मुनि बन्दों तिन शीष नवाई जी ॥८॥
प्रायश्चित दश भेदतें, सोधे संयमको अतिचारो जी।
रात्रिदिवस में दोष जे लागे तिनको निरवारो जी ॥तप०॥९॥
दर्शन ज्ञान चरित्रको अरु तपको विनय करावै जी।
इनके धारकको करै सो विनयाचार कहावै जी ॥तप०॥१०॥
दश प्रकार के मुनिनकी धरि भक्ति हृदय के मांही जी।
टहल करे मृति रोगमें वैयाव्रत तप सुखदाई जी ॥तप॥११॥
वाचन प्रच्छन चिंतवन अरु आज्ञा सर्व की धारें जी।
धर्मोपदेश विधि पंच ये तप स्वाध्याय संभाले जी ॥तप०॥१२॥
बाह्य अभ्यन्तर उपाधिको त्यागि कर्यो समभावो जी।
तप व्युत्सर्ग महान यह तन ममत्व तज्यो करि चाहोजी ॥तप०॥१३॥
आर्त रौद्र दुर्ध्यान हैं तिनको मन वच तन त्यागै जी।
धर्म शुक्ल शुभ ध्यान द्वय ध्यावै तिनको अनुरागै जी ॥तप०॥१४॥
ऐसे द्वादश तप तपै तिनके हो केवलज्ञानो जी।
सकल कर्मको नाशिकै पद पावें निरवाणो जी ॥तप०॥१५॥
ऐसे मुनि तिष्ठत जहां तहां मरी आदि सब रोगाजी।
सिंह सर्प डाकिनी शाकिनी नाशै भूत प्रेत सब शोकाजी ॥तप०॥१६॥
ऐसे गुरु हमको मिलें तब होवे मम निस्तारो जी।
यातें मुनि-चरणन विषैं अब लाग्यो ध्यान हमारो जी ॥तप०॥१७॥

(दोहा)

सुनो हमारी बिनती, है ऋषिवर ! चित लाय।
निजस्वरूपमय मो करो, पूजों मन वच काय॥

ॐ ह्रीं तपोतिशय-ऋद्धि-प्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्यो जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

दयामयी जिनधर्म यह, वृद्धि होउ सुखकार।
सुखी होउ राजा प्रजा, मिटैं सर्व दुख भार॥

॥ इत्याशीर्वाद ॥

(इति चतुर्थ कोष्ठ पूजा)

अथ पंचम कोष्ठस्थ बलऋद्धि धारक मुनि पूजा

॥ स्थापना ॥ (लक्ष्मीधरा छन्द)

धरत सिर धरत सिर धरत सिर चरन तर।
करत हम करत हम करत गुरु भक्ति वर॥
थपत इत थपत इत थपत बल ऋषि-चरन।
बलऋद्धि बलऋद्धि बलऋद्धि अर्चन करन॥

ॐ ह्रीं बलऋद्धि धारक सर्वमुनीश्वरसमूह ! अत्रावतरावतर। संवौषट्। आह्वानम्।

ॐ ह्रीं बलऋद्धि धारक सर्वमुनीश्वर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। स्थापनम्।

ॐ ह्रीं बलऋद्धि धारक सर्वमुनीश्वर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक।

(चाल जोगीरासा)

क्षीरोदधि पदमादि द्रहनिको गंगादिक जल लायो।
रतन जडित भृंगार धार दे श्रीगुरु-चरण चढायो॥

जन्म जरा मृति नाश होत पुनि कर्म-कलंक हराई।
बल ऋद्धिधार मुनीश्वर पूजत बल अनंत हो जाई।।
ॐ ह्री बलऋद्धिधारक सर्व मुनीश्वरेभ्यो जलम् निर्वपामीति स्वाहा ।
मलयागिरि चन्दन मांहीं केसर रंग मिलावें।
कर्पूरादि सुगन्ध द्रव्य बहु तामें मेलि घसावे।
भव-आताप हरत भ्रम नाशत तम अज्ञान नशाई। बल०।।
ॐ ह्री बलऋद्धिधारक सर्व मुनीश्वरेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।
अखित अखंडित सौरभ मंडित चन्द्र-किरण से श्वेतं।
जल प्रक्षालित कनकथाल भरि पुञ्ज करों शुभ हेतं।
परम अखंडित पद हो यातें अनुपम सुख अधिकाई। बल०।।
ॐ ह्री बलऋद्धिधारक सर्व मुनीश्वरेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।
मेरु मंदार सुपारिजात के हरि चंदन के लावें।
चांदी सुवरण कमल मनोहर घ्राण रु चक्षु सुहावें।
काम-बाण विध्वंसन कारण श्रीगुरु-चरण चढाई। बल०।।
ॐ ह्री बलऋद्धिधारक सर्व मुनीश्वरेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
रोग-क्षुधा यह नित प्रति मोकों दुख देवै अति भारे।
ताके नाशन कारण नेवज फेणी मोदक तारैं।
चंद्रिका गुंजा घेवर बावर कनकथाल भरवाई। बल०।।
ॐ ह्री बलऋद्धिधारक सर्व मुनीश्वरेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
दीप रत्नमय कर्पूरादिक स्वर्ण-रकाबी धारै।
जगमग जगमग ज्योति करत है श्री मुनि-चरण उतारैं।
मोह निबिड विध्वंसन हो निज ज्ञान उद्योत कराई। बल०।।
ॐ ह्री बलऋद्धिधारक सर्व मुनीश्वरेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
अगर तगर मलयागिरि चन्दन धूप दशांग बनावें।
गुंजत भृंग सुगन्ध मनोहर खेवत दशदिशि धावें।
कर्म उडै मनु धूम्र मिसनितें आतम उज्ज्वल थाई। बल०।।
ॐ ह्री बलऋद्धिधारक सर्व मुनीश्वरेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञानावरणी दर्शनावरणी मोहकर्म दुखदाई।
वेदनि नाम रु गोत्र अंतराय शिव-मग रोक कराई।
तिनको हर करि शिव-फल पावन श्रीफल आदि चढाई।
बलऋद्धि मुनीश्वर पूजत बल अनंत हो जाई। बल०॥
ॐ ह्री बलऋद्धिधारक सर्व मुनीश्वरेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गन्धाक्षत पुष्प जु नेवज दीप धूप फल लाई।
अष्ट द्रव्य ये कनक-थाल भरि अर्घ करो गुण गाई॥
झं झं झं झं झांज बजावत द्रुम द्रुम मिरदंग धुनाई।
नृत्य करत नूपुर झंकारत मुनिपद अर्घ चढाई। बल०॥
ॐ ह्रीं बल-ऋद्धि-धारक-सर्व मुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक पूजा

(दोहा)

बलऋद्धि धार मुनिंदवर, भये कर्म-मल छेद।
अर्घ प्रत्येक चढायके, पूजों ऋद्धि के भेद॥
ॐ ह्रीं बल-ऋद्धि-धारक-सर्व मुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सवैया तेईसा तथा कुसुमलता छन्द)

एक घाट एकट्ठी परिमित श्रुतज्ञान अक्षर सब तिनको।
मनकरिकै सब अर्थ विचारै एक महूरत-मांहीं जिनको॥
मनोबली यह ऋद्धि कहावत तांहि धरैं तिन श्रीमुनिवरको।
अष्ट द्रव्यमय अर्घ लेय करि निशि दिन पूजत चरण कमलको॥१॥
ॐ ह्रीं मनोबल-ऋद्धि-धारक-सर्व मुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादशांगमय श्रुतज्ञानको पाठ करें मुनिवर उच्चस्वर।
एक मुहूरत मांहीं सबकी स्वर व्यंजन मात्रादि शुद्धवर॥
तालव कंठ खेद नहिं होवे वचनबली है सो ही ऋषिवर।
तिनके चरन कमलको पूजो अष्टद्रव्य को धार अर्घकर॥२॥
ॐ ह्रीं वचनबल-ऋद्धि-धारक-सर्व मुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक बरस काउतसर्ग धारै अचल अंग चल आसन नाहीं।
तीन लोक चिट्टी अंगुलतें ऊँच नीच बलतें जुही कराई ॥
गर्व करै नहिं ऐसे बलको वही मुनीश्वर शिव सुखदाई।
कायबल यह ऋद्धिधार ऋषि तिन्हें पूजि हैं शीष नमाई ॥३॥

ॐ ह्रीं कायबल-ऋद्धि-धारक-सर्व मुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(सोरठा)

ऐसी बलऋद्धि धार, जे मुनि ढाई द्वीपमें।
तिनकी पूजन सार, करिहों अर्घ चढायकें ॥

जयमाला

(सोरठा)

गुणको नाहीं पार बलऋधि-धारी मुनिनको।
पढौं अबै जयमाल, भक्ति थकी वाचाल हो ॥१॥

(दोहा—ढाल हमारी करुणा ल्यो जिनराज)

बलऋद्धि-धर मुनिराजके, चरण कमल सुखदाय।
बारवार विनती करो, मन वच शीष नवाय,
हमारी करुणा ल्यो ऋषिराज ॥

थावर जंगम जीवके, रक्षक हैं मुनिराय।
मोहि कर्म दुख देत हैं इनतैं क्यों न छुडाय ॥ हमारी० ॥३॥

राज ऋद्धि तज बन गए, धर्यो ध्यान चिद्रूप।
ऋद्धि आय चरणा लगी, नमन करत सब भूप ॥ हमारी० ॥४॥

तपगज चढि रण-भूमि में, क्षमा खडग कर धार।
करम अरी की जय करी, शांति ध्वजा करि लार ॥ हमारी० ॥५॥

निराभरण तन अति लसै, निर अंवर निरदोष।
नगन दिगंबर रूप है, सकल गुणनिको कोष ॥ हमारी० ॥६॥

क्रोध कपट मद लोभको, किंचित् नहिं लवलेश।
मूरति शान्त दयामयी वंदित सकल सुरेश॥
हमारी करुणा ल्यो ऋषिराज ॥७॥

तुम ऋषि दीनदयाल हो, अशरण के आधार।
बार बार विनती करों, मोहि उतारो पार॥ हमारी० ॥८॥

जो त्रिभुवनके सब मिलें, दानव मानव इन्द्र।
हलै चलै नहिं सबनितें, बल ऋद्धिधार मुनिंद॥ हमारी०॥९॥

मैं दुखिया संसारमें, तुम करुणानिधि देव।
हरौ दुःख यह मो तणो, करि हों तुम पद सेव॥ हमारी० ॥१०॥

तुम समान संसारमें, तारण तरण जिहाज।
हे मुनीश! कोऊ नहीं, यातें तुमको लाज॥ हमारी० ॥११॥

तुम पद मस्तक हम धरें, भरी भक्ति उर मांहि।
निज स्वरूप मय कीजिए, भव-संतति मिट जाहिं॥ हमारी० ॥१२॥

(घत्ता)

हे करुणानिधि सकल गुणाकर, भक्ति हृदय हम तुम धारी।
इस भवदुखहर अनुपम सुखकर, ऋषिवर बल ऋधिके धारी ॥१३॥

ॐ ह्रीं बल-ऋद्धि-प्रास-सर्व मुनीश्वरेभ्यो जयमालाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल छन्द)

सात ईति भय मिटै देश सुखमय बसै।
प्रजा-मांहि धन धान्य महर्द्धिकता लसै॥
राजा धार्मिक होय न्यायमग में चलै।
या पूजन फल यह धर्म जिनवर झिलै॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

(इति पंचम कोष्ठ पूजा)

*

अथ षष्ठकोष्ठस्थ औषधऋद्धिधारक मुनि पूजा

॥ स्थापना ॥ (सवैया तेईसा)

औषधऋद्धि-धार मुनी अविकार धरैं तप भार महा अधिकाई।
तिनके तनकी परछांही परै तहां रोग विषाद अनेक नशाई॥
ऐसे मुनिराज करैं सब शांति सरैं भव-भ्रान्ति जिनेश की नाईं।
थापत हैं हम पूजन काज हरो मम विघ्न कल्याण कराईं॥

ॐ ह्रीं क्षुद्रोपद्रव-सर्व-विघ्न-विनाशक औषध-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वर समूह ! अत्रावतरावतर ! संवौषट् आह्वानम्।

ॐ ह्रीं क्षुद्रोपद्रव-सर्व-विघ्न-विनाशकौषध-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वर समूह ! अत्र मम तिष्ठ तिष्ठ ! ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं क्षुद्रोपद्रव-सर्व-विघ्न-विनाशकौषध-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्र समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक

(चाल-आसावारी तथा होली काफी)

रतन जडित भृंगार मध्य शुभ भर करि प्रासुक जलको।
धार देत ही नाश करत है सब कर्मादिक मलको।
यजों मुनि-चरण-कमलको, औषधि ऋध्यधीश यतीश ॥यजों०॥

ॐ ह्रीं सर्व-क्षुद्रोपद्रव-सर्व-विघ्न-विनाशनाय सर्वरोगहराय सर्वशांतिकराय औषध-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो जलम् निर्वपामीति स्वाहा।

भव-आताप बढ्यो अति भारी शोषत मोहि निबलकों।
चन्दन केसर चरण चढाओ पावो पद निर्मलको ॥यजों०॥

ॐ ह्रीं सर्व-क्षुद्रोपद्रव-सर्व-विघ्न-विनाशनाय सर्वरोगहराय सर्वशांतिकराय औषध-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो चन्दनम् निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णथाल भरि चंद-किरण सम ल्यायो अक्षत उज्ज्वलको ।
अक्षय पद पावन कारन पूजों श्रीगुरु पाद युगलको ।।
यजों मुनि-चरण-कमलको, औषधि ऋध्यधीश यतीश ।।यजों०।।

ॐ ह्रीं सर्व-क्षुद्रोपद्रव-सर्व-विघ्न-विनाशनाय सर्वरोगहराय सर्वशांतिकराय औषध-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

काम शत्रु मो अधिक सतावै आतमके ल्यावत मल को ।
याके नाश करन के कारन मुनिपद चहोडों मलकों ।।यजों०।।

ॐ ह्रीं सर्व-क्षुद्रोपद्रव-सर्व-विघ्न-विनाशनाय सर्वरोगहराय सर्वशांतिकराय औषध-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षुधावेदनी रोग महा दुठ जारत हृदय कमलको ।
नाना विधि नेवजतें पूजों शांति करत क्षुत मलकों ।।यजों०।।

ॐ ह्रीं सर्व-क्षुद्रोपद्रव-सर्व-विघ्न-विनाशनाय सर्वरोगहराय सर्वशांतिकराय औषध-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा ।

दीप रतनमय ज्योति मनोहर नाश करत तम–मलको ।
ज्ञान उद्योतन कारन पूजो श्रीगुरु-पाद-कमलको ।।यजों०।।

ॐ ह्रीं सर्व-क्षुद्रोपद्रव-सर्व-विघ्न-विनाशनाय सर्वरोगहराय सर्वशांतिकराय औषध-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अगर तगर मलयागिरि चन्दन केलीनन्द विमलकों ।
खेवत धूप दशांग अग्नि संग जारत है अघ-मलकों ।।यजों०।।

ॐ ह्रीं सर्व-क्षुद्रोपद्रव-सर्व-विघ्न-विनाशनाय सर्वरोगहराय सर्वशांतिकराय औषध-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

विविध भांतिके स्वर्णथाल भरि लीने बहु शुभ फलकों ।
शुद्ध भाव करि नितप्रति पूजों शिवसुख पावे विमलकों ।।यजों०।।

ॐ ह्रीं सर्व-क्षुद्रोपद्रव-सर्व-विघ्न-विनाशनाय सर्वरोगहराय सर्वशांतिकराय औषध-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो फलम् निर्वपामीति स्वाहा ।

जल चन्दन अक्षत अरु पुष्प जु नेवज दीप विमलको।
धूप फलादिक अर्घ चढाये पावत पद निर्मलको ।।
यजों मुनि-चरण-कमलको, औषधि ऋध्यधीश यतीश ।।यजों०।।

ॐ ह्रीं सर्व-क्षुद्रोपद्रव-सर्व-विघ्न-विनाशनाय सर्वरोगहराय सर्वशांतिकराय औषध-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ प्रत्येक पूजा

(दोहा)

औषध ऋधिके भेद वसु, ता धारक ऋषिराय।
भिन्न भिन्न तिनके चरण, पूजों अर्घ चढाय ।।

ॐ ह्रीं अष्टऔषध-ऋद्धिधारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(अडिल्ल छंद)

अंग उपांग रु नख केशादिक सर्व ही।
रज पद मुनिकी लगत हरत सब रुज मही ।।
आमर्शौषधिऋद्धि याहि मुनिवर धरैं।
तो ऋषिवर के पाद यजत शिव-तिय वरैं ।।१।।

ॐ ह्रीं आमर्शौषधि-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मुनि-मुखका खँखार थूकको लगत ही।
सर्व रोग मिट जाय असाध्य जु तुरत ही ।।
खेलौषधि ये ऋद्धिधार मुनिवर तनें।
पाद-पद्म हम यजे व्याधि सब ही हनें ।।२।।

ॐ ह्रीं खेलौषधि-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मुनिके अंगके स्वेद मांहिं जो रज परैं।
सो लागत तत्काल व्याधि सब ही हरै ।।
यह जल्लौषधिऋद्धि धारको नित यजों।
निशदिन तिनके चरण-कमलको मैं भजों ।।३।।

ॐ ह्रीं जल्लौषधि-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दन्त नासिका अंग मैल-मल सर्व ही।
व्याधि सर्वको नाश करत हैं लगत ही।।
मल्लौषधि ऋद्धि येह ताहि धारक मुनी।
पूजत मन वच काय अर्घ करके गुनी।।४।।

ॐ ह्रीं मल्लौषधि-ऋद्धि-प्राप्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विष्टा मूत्र जु वीर्य सर्व ऋषिराज के।
नाना व्याधि-हरन्त लगत ही साधिके।।
ऋद्धि विडौषधधार तास पायन परैं।
अष्ट द्रव्यकों मेलि सदा पूजन करैं।।५।।

ॐ ह्रीं बिडौषधि-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनके तनसूं पवन लागि जा तन लगै।
आधिव्याधि बहु रोग विषादिक सब भगै।।
भूत प्रेत सर्पादि सिंहको भय मिटै।
सर्वौषधि ऋधिधार पूजतैं अघ हटै।।६।।

ॐ ह्रीं सर्वौषध-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनके करमें अमृत होय विष सर्व ही।
मूर्छित निरविष होत वचन सुन तुरत ही।।
आस्यविषौषधिऋद्धि-धार ऋषिवर तिन्हें।
पूजों मन वच काय शुद्ध करिके जिन्हें।।७।।

ॐ ह्रीं आस्यविषौषधि-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

थावर जंगम सर्व आदि को भय भरै।
दृष्टि परत ततकाल सर्प छिनमें हरै।।
दृष्टिविषौषधि ऋद्धिधार मुनिराज को।
मन वच तन कर यजों मिटन सब व्याधिकों।।८।।

ॐ ह्रीं दृष्टि विषौषधि-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

सर्वौषधि-ऋद्धिधार, सर्वमुनीश्वर हैं तिन्हें।
वसु द्रव्यतें भरि थार, पूजों अर्घ चढायकें ॥

ॐ ह्रीं आमर्शौषधि-ऋद्धि-धारकादि-दृष्टि-विषौषधि-ऋद्धि-धारक-पर्यन्त सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(दोहा)

जिनके बन्दन पूजतें, सकल व्याधि मिटि जाय।
औषधऋधि-धर मुनिनकों, नमों नमों मन लाय ॥१॥

(चाल बीजा की)

जय सर्वौषधिऋधिके धार मुनिराय,
मन वच बन्दोंजी मैं शीष नवाय, ऋषिवरजी।
नग्न दिगम्बर हो परम पवित्र हो चित अति अमलान,
करुणा-सागर हो दया-निधान, ऋषिवरजी ॥२॥

दरश करत ही हो वात पित्त कफ खांस रु सांस,
ज्वर शीतादिक हो दाह हुलास, ऋषिवरजी।
कुष्ट उदम्बर हो कालज्वर अरु सब संनिपात,
साध्य असाध्य जु हो सब रोग नशात, ऋषिवरजी ॥३॥

पंगु पुरुषके जी चरण होय गिरि शिखर चढन्त,
जन्म अन्धकों जी सब सूझत, ऋषिवरजी।
गूंगा बोलता है हो वचन शुभ मुनिवर परताप,
सब जीवों के होवै जो सुन्दरगात, ऋषिवरजी ॥४॥

सिंह व्याघ्र उन्मत्त गज सब भय मिट जाय,
तुम पद ध्यावै जी जो लव ल्याय ऋषिवरजी।

कृष्ण सर्प तुम नामतें लटसम हो जाय,
श्वान स्याल अरु वृश्चिकको भय न रहाय, ऋषिवरजी ॥५॥
डायनि सायनि हो योगिनी ये दूर भजाय,
भूत प्रेत ग्रह दुष्टजु हो तुरत नसाय, ऋषिवरजी।
तुम नाम मंत्रतै हो अगनि-झल जलसम हो जाय,
सिंधु भयानक जी थलसम थाय, ऋषिवरजी ॥६॥
हृदय-कमल में जी तुम नामको जो ध्यान कराय,
नृप-भय ताके जी होवे कछु नांय, ऋषिवरजी।
विघ्न अनेक जु जी नाश हो शुभ मंगल थाय,
जो ध्यावे जी मन वच काय, ऋषिवरजी ॥७॥
सर्वौषधिऋद्धिधार जी जहँ करत विहार,
दुरभिक्ष रहै नहीं जी ता देश मझार, ऋषिवरजी।
आदि व्याधि भय देश के सब ही मिट जाय,
सब जीवों के जी अति सुख थाय, ऋषिवरजी ॥८॥
वह मुनि जा बनके विषैं शुभ ध्यान करात,
जाति-विरोध हो सब बैर नसात, ऋषिवरजी।
षट्ऋतु के हो फूल फल सब वृक्ष फलन्त,
सूखे सरवर हो तुरत भरन्त, ऋषिवरजी ॥९॥
नाम तिहारो जो जपै मन वच तिरकाल,
जो भवि गावै जी तुम गुणमाल, ऋषिवरजी।
भोग संपदा हो वै नर पायकै फिर इन्द्र पदादि,
शिव सरूप मय होवै जी निज आस्वाद, ऋषिवरजी ॥१०॥

(घत्ता)

औषधऋद्धि-धारी, मुनि अविकारी, भक्ति तिहारी, हृदय धरी।
करि पूजा सारी, अष्ट प्रकारी, यह गुणमाला कंठ धरी ॥

ॐ ह्रीं औषध-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्यो जयमालाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल छन्द)

आधि व्याधि कर नाश सर्व भयको हरो।
ऋद्धिवृद्धि घरमाहिं सकल संपति भरो॥
जिनधर्मी जनमाहिं सकल मंगल करो।
या पूजन परताप विघ्न सब ही टरो॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

(इति षष्ठ कोष्ठ पूजा)

सप्तमकोष्ठ रसऋद्धिधार मुनि-पूजा

॥ स्थापना ॥ (कुण्डलिया)

रसऋद्धि-धार मुनिन्द के, चरण-कमल सिरनाय।
बन्दों मन वच काय करि, भाव भक्ति चित लाय॥
भाव भक्ति चित लाय करौं मैं शुभ आह्वानन।
आप पधारो नाथ तिष्ठ इत यह संस्थापन॥
निकट होहु मम बार बार विनती यह मेरी।
पूज करन चित चाह हमारे ऋषिवर तुमरी॥

ॐ ह्रीं रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वर समूह ! अत्र अवतरावतर ! संवौषट्। आह्वानम्।

ॐ ह्रीं रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ! ठः ठः ! स्थापनम्।

ॐ ह्रीं रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अष्टक

(सुन्दरी छन्द)

विमल केवल उज्वल ल्यायकै, सुर नदी जल भृङ्ग भरायके।
जनम मृत्यु जरा क्षयकारणं, मुनि यजामि ऋद्धिरस धारकं॥
ॐ ह्रीं रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज कर्म-कलंक विनाशनै, मलय उद्भव गन्ध सुगन्धनै।
कदलि नन्दन कुंकुम वारिकं, मुनि यजामि ऋद्धिरस धारकं॥
ॐ ह्रीं रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अखित उज्वल दीर्घ अखंडकं, किरणचन्द समान सुद्योतकं॥
अतुल सौख्य सुथानक दायकं, मुनि यजामि ऋद्धिरस धारकं॥
ॐ ह्रीं रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रचुर गन्ध सुपुष्प सुमालया, भ्रमर गुञ्जत सौरभ धारिया।
निविड़ बाण मनोद्भव वारिकं, मुनि यजामि ऋद्धिरस धारकं॥
ॐ ह्रीं रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्ण पात्र भरे नैवेद्यके, घृत सुचारु रसादिक सज्यके।
प्रचुर रोग क्षुधादि निवारकं, मुनि यजामि ऋद्धिरस धारकं॥
ॐ ह्रीं रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रतन दीप मनोज्ञ उद्योतकं, स्वर्णपात्र धरे शुभ ज्योतिकं।
निरवधी सुविकास प्रकाशकं, मुनि यजामि ऋद्धिरस धारकं॥
ॐ ह्रीं रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगर चन्दन धूप सुधूपनै, अलि समूह भ्रमैति सुगन्धनै।
कर्म-काष्ठ-समूह सुजारकं, मुनि यजामि ऋद्धिरस धारकं॥
ॐ ह्रीं रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुभग मिष्ट मनोज्ञ फलावली, हरत घ्राण सुचक्षु सुखावली।
मुकति थान मनोहर दायकं, मुनि यजामि ऋद्धिरस धारकं॥
ॐ ह्रीं रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्यो फ़लं निर्वपामीति स्वाहा।

जल सुगन्ध सुतन्दुल पुष्पकै, चरु सुदीप सुधूप फलार्घकै।
पद अनर्घ्य महाफल दायकं, मुनि यजामि ऋद्धिरस धारकं ॥

ॐ ह्रीं रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्यो अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रत्येक पूजा

(सोरठा)

रस ऋद्धि षट् परकार, तिनकै धारक जे मुनी।
रोग क्षुधादि निवार, पूजों अर्घ चढायकैं ॥

ॐ ह्रीं रस-ऋद्धि-धारक-षट् प्रकार सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(चौपाई)

कर्म-उदै कोउ कारन पाय, क्रोध थकी मरि वच निकसाय।
सो प्राणी ततकाल मराय, ते आशीविष यजन कराय ॥१॥

ॐ ह्रीं आशीविष-रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्रोध दृष्टि मुनिकी जो परैं, परतैंही तत्काल सो मरै।
दृष्टिविषारसऋधिधर मुनी, यजन करो मैं तिनको गुनी ॥२॥

ॐ ह्रीं दृष्टिविष-रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षीर रहित जहँ अहार जु कोय, सो मुनि कर रस दुग्ध जु होय।
वचन दुग्ध सम पुष्टि कराय, क्षीरस्रावि-धर अरचों पाय ॥३॥

ॐ ह्रीं क्षीर-स्रावि-रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मिष्ट रहित जो मुनि कर अहार, होय मिष्टरस सहित जु अहार।
मुनि वच पुष्ट करत मधु समा, मधुस्रावी ऋधि पूजत हमां ॥४॥

ॐ ह्रीं मधुस्रावि-रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

घृत करि अहार करै मुनी, घृत-संयुक्त होय बहु गुनी।
वच मुनिके घृतसम गुण करैं, सर्पिस्रावि रस पूजन करें ॥५॥

ॐ ह्रीं सर्पिस्रावि-रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

विष अमृत मुनि कर हो जाय, वचनामृतसम पुष्टि कराय।
अमृतस्राविरसऋद्धि यही, ता घर पूजे हो शिव मही ॥६॥

ॐ ह्रीं अमृतस्रावि-रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(दोहा)

ये रसऋधि के भेद युत, सर्व ऋषीश्वर नाय।
मन वच तन करि पूजिहों, हरषित चित अधिकाय।

ॐ ह्रीं आशीविष-रस-ऋद्ध्यादि-अमृतस्रावि-ऋद्धि-पर्यंतषट्रस-ऋद्धिधारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

(सवैया तेईसा)

रसपरित्याग धर्यो मुनिराज, तिन्हें फल ये रसऋद्धि उपाई।
अहार रसादिक त्याग करै, तिनके पद बन्दत शीष नवाई ॥
सो ऋषिराज करो हम काज, हरो अघसाज जु पुण्य बढाई।
मन-वच-काय त्रिशुद्धि त्रिकाल, धरों तिनपाद सदा उरमाहीं ॥१॥

(ढाल वीर जिनन्दकी)

दुष्ट कहैं मुनि राजकोजी, कर्कश वचन महान।
अति कठोर कटु निंद्य सुनजी क्रोध करै नहिं मान ॥
ऋषीश्वर बसौ हृदयके मांहि ॥२॥

कुल जात्यादिक बुद्धिकोजी, तपको नहिं अभिमान।
कोमल पर करुणामयीजी, मार्दव धर्म महान ॥ऋषी०॥३॥

कूट कपट सब त्यागियोजी, रंच न हिरदा माहिं।
यही आर्जव धर्म धरैजी, मन वच बन्दों ताहिं ॥ऋषी०॥४॥

हित मित सत्य जु वाक्यको जो, बोलत वे मुनिराय।
धर्मोपदेशतें अन्य कछुजी, बोलत नाहिं सुभाय ॥ऋषी०॥५॥

लोभ सर्व तीनको गयोजी, धरि संतोष महान।
शौच धर्म यह धारिकै जी, भए चित्त अमलान ॥
ऋषीश्वर बसौ हृदयके मांहि ॥६॥

छहों कायके जीवकी जी, करुणा है अधिकाय।
पांचों इन्द्रिय वश करी जी, संयम धरि चित लाय ॥ऋषी०॥७॥

द्वादश विधि तपको तपैं जी, अन्तर बाह्य महान।
ध्यावें निज चिद्रूपको जी, ध्यान सुधारस पान ॥ऋषी०॥८॥

सर्व परिग्रह त्याग कर्‍योजी, ज्ञानदान नित देय।
जाति जीवको अभय दियोजी, त्याग धर्म धरि एव ॥ऋषी०॥९॥

बाह्य नग्नता अति लसैजी, अंतरंग अति शुद्ध।
ममत तज्यो निज देहसो जी, आकिंचन व्रत इद्ध ॥ऋषी०॥१०॥

सहस अठारा शीलकोजी, पालत मन वच काय।
ब्रह्मचर्य ऐसो धरैजी, आतम में रति थाय ॥ऋषी०॥११॥

या विध दस परकारकोजी, जिनभाषित जो धर्म।
ताहि शुद्ध धार्‍यो मुनीजी, मेटि पापके कर्म ॥ऋषी० ॥१२॥

ऐसे हम मुनिराजको जी, नमत शीष धरि हाथ।
बांह पकरि भव-सिंधुतेंजी, काढो मोको नाथ ॥ऋषी ॥१३॥

स्वरूप तिहारो हृदय विषैजी, धार्यो मन वच काय।
भवसागर को भय मिट्योजो, यातें त्रिभुवनराय ॥ऋषी० ॥१४॥

(धत्ता)

ऐसी गुणमाला परम रसाला जो भविजन कंठे धरई।
हनि जर मरणावलि नाश भवावलि मुक्तिरमा वह नर वरई ॥

ॐ ह्रीं रस-ऋद्धि-धारक सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(दोहा)

सुखी होहु राजा प्रजा, मिटो सकल संताप।
बढो धर्म जिनदेवको, श्री ऋषिराज प्रताप ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

(इति सप्तम कोष्ठ पूजा)

* * *

अष्टमकोष्ठे अक्षीणमहानसऋद्धिधारक मुनि पूजा

॥ स्थापना ॥ (अडिल्ल छन्द)

अक्षयनिधिके दायकवायककर्मके, अक्षीण महानसऋद्धिधारमुनिवर्यके।
आह्वाननसंस्थापन मम सन्निहितो करो, संवौषट् ठः ठः वषट्वारत्रयउच्चरो ॥

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वर समूह ! अत्रावतरावतर । संवौषट् आह्वानम् ।

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ! ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अष्टक

(गीता छन्द)

हिमवन समुद्भव नीर शीतल रतनभृंग भरावही।
जन्म जर अर मृत्यु नाशन क्षपक चरण चढावही ॥

इन्द्र चन्द्र नरेन्द्र पूजित अखयनिधि दायक सदा।
अक्षीण-महानसऋद्धि-धर मुनि पूजिहों मैं सर्वदा॥

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो जलम् निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीर चन्दन केलिनन्दन घसत परिमल दिग महै।
अलि गुंज करत दिगन्तरालैं पूजतें भव-तप जहै॥ इन्द्र०॥

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सित अखित चन्द्रमरीचिका सम अति सुगन्धित पावना।
भरि थाल कणमय अखयपदकों चरन-कमल चढावना॥ इन्द्र०॥

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचवरण प्रसून सुन्दर गन्धतें मधुकर भ्रमें।
सो लेय मुनिपदको चहोडें समरको छिनमें दमें॥ इन्द्र० ॥

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घेवर सु बावर मोदकादिक कनकथाल भराइये।
चरु सद्यतैं मुनि-चरण पूजैं क्षुधारोग नसाइये॥ इन्द्र० ॥

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप मणिमय ज्योति सुन्दर धूम्रवर्जित सोहने।
तम मोहपटल विध्वंस कारण चरण युग मुनि अरचने॥ इन्द्र० ॥

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दशविधि अगनिके संग स्वर्ण धूपायन भरैं।
धूम्र मिस वसु कर्म नाशै भविकजन जय जय करैं॥ इन्द्र०॥

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो धूपम् निर्वपामीति स्वाहा।

दाख श्रीफल चारु पूंगी स्वर्ण थाल भराइये।
श्रीऋषीश्वर पूजतें ही मुक्ति के फल पाइये॥ इन्द्र०॥

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो फलम् निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गन्ध सुगन्ध तन्दुल पुष्प चरु दीपक धरैं।
धूप फल ले स्वर्ण भाजन अर्घ लैं शिवतिय वरैं॥
इन्द्र चन्द्र नरेन्द्र पूजित अखयनिधि दायक सदा।
अक्षीण-महानसऋद्धि-धर मुनि पूजिहों मैं सर्वदा॥

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

अथ प्रत्येक पूजा

(सोरठा)

द्विविध प्रकार सुजानि, अक्षीणमहानसऋद्धि यह।
होय पापकी हानि, तो धारक मुनिवर यजत॥

ॐ ह्रीं द्विविध-प्रकार-अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्व०

(कुसुमलता छन्द)

अहार करै जाके घर मुनिवर, ता दिन अहार अटूट हो जाई।
चक्रवर्ति-सेना सब जीमें, तो भी वा दिन टूटत नांहीं॥
वे अक्षीणमहानस ऋद्धिधर यतिवर बन्दों शीश नमाई।
तिनके पद पूजत जो अहनिशि नवनिधि हो ताके घर माहीं॥१॥

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

च्यार हाथ घर माहीं मुनिवर तिष्ठत सब जीवन सुखदाई।
ता थानक इन्द्रादिक सब अरु चक्रवर्ति की सैन्य समाई॥
भीर जहां नहिं होत सर्व जन सुखमय तिष्ठत ता मधि भाई।
अक्षीणमहानस ऋद्धि-धार गुरु तिनकों पूजों मन वच काई॥२॥

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

जो ऐसी ऋद्धि को धरे, श्रीऋषिराज महान।
तिनको पूजों अर्घ दे, देहु यथारथ ज्ञान॥

ॐ ह्रीं द्विविध अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्व०

जयमाला

अक्षीणमहानऋद्धि धरा, तिनके पद बन्दत सर्व नरा।
मैं ध्यावत हूँ, गुण गावत हूँ, मो दीजे ऋषिवर सिद्धधरा ॥१॥

(ढाल-'ते गुरु मेरे उर बसो, संसार असारियो' दश भव तथा गोपीचन्द'की इन चारों चालमें)

पक्ष मास के पारणै, अहार करनके काज।
मुनिवर करत विहार हैं, ईर्यापथकूं साज।
वे गुरु मो हिरदे बसो, तारन तरन जिहाज ॥२॥

धनिक दरिद्री घर तणो, तिनके नाहीं भेद।
चांद्री चर्या धरत हैं, लाभ अलाभ न खेद ॥ वे गुरु०॥३॥

अयाचीक जिन वृत्ति हैं, मुखतें नाहिं कहात।
केवल देह-दिखायके, खडे रहत नहिं भ्रात ॥ वे गुरु०॥४॥

जो गृहस्थ शुभ भक्तिधर, प्रासुक जल भृंगार।
जाहि दिखावे तांहि गृह, खडे रहत नहिं भ्रात ॥ गुरु०॥५॥

प्रक्षालन मुनिचरण को, पूज करैं हरषाय।
मन वच काया शुद्धि करि नमन करत शिर नाय ॥ वे गुरु० ॥६॥

तिष्ठ तिष्ठ मुनिराज इत, अहार पान है शुद्ध।
यह नवधा मुनि भक्ति लखि, अहार करत अविरुद्ध ॥ वे गुरु०॥७॥

श्रद्धा शक्ति रु भक्ति युत, ईर्षा लोभ हरन्त।
दया क्षमा ये गुण धरैं, ता घर अहार करन्त ॥ वे गुरु०॥८॥

षट् चालीस जु दोष तजि, अन्तराय बत्तीस।
चौदह मल वर्जित सदा, अहार करत गुरु ईश ॥ वे गुरु०॥९॥

मुनि-अहार प्रभावतें, गृहस्थ धरनि के मांहि।
देव करैं नभतैं तहां रत्नवृष्टि सुखदाइ ॥ वे गुरु०॥१०॥

कल्पवृक्ष के पुष्प अरु, जल सुगन्ध वरषांहि।
धन्य दान दातार धनि पंचाश्चर्य कराहि ॥ वे गुरु०॥११॥

धन्य दिवस धनि वा घड़ी, धनि मेरो तब भाग।
ऐसे मुनिवर के विषै, करै दान अनुराग॥
वे गुरु मो हिरदे बसो, तारन तरन जिहाज॥१२॥

धन्य युगल पद होय तब, करै जात ऋषिराज।
धन्य हृदय हो ध्यानतैं, ध्याऊं नित हित काज॥ वे गुरु०॥१३॥

दरश करत तव चरणकी, चक्षु धन्य तब थाय।
अफल करणयुग होय तब, वचन सुनै ऋषिराय॥ वे गुरु०॥१४॥

पूज करों तव चरणकी, करयुग धनि जब थाय।
शीष धन्य तब ही हमें, नमत चरण ऋषिराय॥ वे गुरु०॥१५॥

मो किंकरकी वीनती, सुनिये श्रीऋषिराज।
भवदधि दुखमयतें मुझे, डूबत काढो आय॥ वे गुरु०॥१६॥

बार बार विनती करूं, मन वच शीष नमाय।
पर-स्वरूप-मय हो रह्यो, मो निजरूप कराय॥ वे गुरु०॥१७॥

(घत्ता)

उर निज ध्याऊँ, शीश नमाऊँ, गाऊँ गुण मैं हो चेरा।
पद अजरामर, सकल गुणाकर, द्यो मुनिवर हर भव-फेरा॥

ॐ ह्रीं अक्षीण-महानस-ऋद्धि-धारक-सर्वमुनीश्वरेभ्यो जयमालार्घं निर्व०

(अडिल्ल छन्द)

अक्षीणमहानसऋद्धि-धार जो ऋषि यजै,
ताके घरतें दुःख भार आपद भजै।
ऋद्धि वृद्धि हो अखै सकल गुण सिद्धि हो,
केवलज्ञान लहाय अचल समृद्धि हो॥

इत्याशीर्वादः

(इति अष्टम कोष्ठ पूजा)

*

पंचम कालकी आदिमें हुए मुनिराजोंको अर्घ

(चौपाई–रूपक)

गौतमस्वामी सुधर्म जु स्वामी, जम्बूस्वामी अति अभिरामी।
वीर जिनेन्द्र पछै त्रय नामी, बासठ वर्ष मध्य शिवगामी ॥१॥
पंचम काल आदिके मांहीं, केवलज्ञान लह्यो सुखदाई।
तिनको पूजों अर्घ चढाई, ता फल केवलज्ञान लहाई ॥२॥

ॐ ह्रीं वर्द्धमान-जिनेन्द्र-पश्चात् बासठ वर्ष मध्ये त्रय केवलज्ञान धारक मुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं नि०

विष्णुनन्दि मित्र मुनिराई, अपराजित गोवर्धन भाई।
भद्रबाहु ये पंच मुनिन्दा, सब श्रुत धारक भये यतिन्दा ॥३॥
शत संवत्सरमें सुखदाई, तिनके चरण नमों मनलाई।
वसु द्रव्यनि ले अर्घ बनाई, पूजत हों मैं मन वच काई ॥४॥

ॐ ह्रीं केवली-त्रय-पश्चात्-शत-वर्ष-मध्ये पंच श्रुत-केवलिभ्योऽर्घ्यं नि०

विशाख प्रौष्ठिल क्षत्रिय जया, चारज नागसेन मुनि हुया।
सिद्धारथ धृतसेन मुनीशा, विजय बुद्धिलिंग है जु यतीशा ॥५॥
अंगदेव धरसेन मुनिन्दा, चे दश पूरबधार यतिन्दा।
इकसै तियासी बरस मझारा, पूजों मैं उतरे भव पारा ॥६॥

ॐ ह्रीं विशाखाचार्यादि-श्रुतकेवलि-पश्चात् इकसौतियासी वर्षमध्ये दशपूर्वधारक एकादश मुनिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नक्षत्राचारज जयपाल मुनीशा, पांडव ध्रुवसेनादिक कंसा।
चारज पंचएकादश अंगा, वन्दन करत पाप हो भंगा ॥७॥
ये मुनि शत अरु वर्ष-तेईशा, मांहि भए गुणगणके ईशा।
पूजों कर ले अर्घ मुनीशा, सकल दोष क्षयकार गणीशा ॥८॥

ॐ ह्रीं दशपूर्व-धारक-पश्चात् एक सौ तेईस वर्ष मध्ये एकादशांग-धारक-मुनिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुभद्र और यशोभद्र नामा, भद्रबाहु लोहाचार्य बखाना ।
चार मुनी सत्याणव बरसा, मांहि भए दसअंगधर परसा ।।९।।

ॐ ह्रीं एकादशांग धारक-पश्चात् सत्याणवे-वर्षमध्ये सुभद्रादि दशांगधारक-मुनिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ऐलाचार्य जु माघ सु नन्दी, धरसेनाचारज गुणवृन्दी ।
पुष्पदन्त भूतबलि नामा, प्रथम अंग धारी अभिरामा ।।१०।।
सोरु अठारा वर्ष जु मांहीं, निद्यागुण करि सब अधिकाई ।
अर्घ लेय पद पूज कराई, तातैं मो सब पाप नसाई ।।११।।

ॐ ह्रीं एकादशांगधारकमुनिपश्चात् एकसौअठारहवर्षमध्येऐलाचार्यादि एकांगधारक मुनिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ,

जिन चन्द्र कुन्दकुन्द मुनिइन्दा, मुनिगणमें ज्यों उडगन चन्दा ।
उमास्वामि सूत्रके कर्त्ता, समन्तभद्र बहु दुख के हरता ।।१२।।

शिवकोटी रु शिवायन स्वामी, पूज्यपाद बंदों गुणधामी ।
ऐलाचार्य वीरसेन जु जानों, जिनसेन नेमिचंद्रनैं मानों ।।१३।।

रामसेन तार्किक गुणधारी, अकलंक स्वामी बौद्ध जितारी ।
विद्याअनंत माणिकनंदी, प्रभाचंद्र भव भय हर फन्दी ।।१४।।

रामचंद्र वासवचंद स्वामी, गुणभद्राचारज हैं नामी ।
वीरनंदि आदिक गुणस्वामी, सिद्धान्त चक्रवर्ति गुणधारी ।।१५।।

नग्न दिगंबर विद्या ईशा, पंचमकाल आदि गुणधीशा ।
जिनमत थापन बुद्धि गंभीरा, परमत उत्थापक महावीरा ।।१६।।

बारंबार त्रिकाल हमारी, तिन पद वंदन है सुखकारी ।
निर्विकार मूलगुण-धारी, निज संपति द्यो मो अघहारी ।।१७।।

अष्टद्रव्य मय अर्घ बनावो, पद पूजों मैं गुणगण गावों ।
सम्यग्ज्ञान देहु मुझ ईशा, याचत हों पदतर धरि शीशा ।।१८।।

ॐ ह्रीं एकांग-धारक-पश्चात् जिनचन्द्र-कुन्दकुन्दादिक-सर्वनिर्ग्रंथ-मुनिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

समुच्य जयमाला

(सवैया तेईसा)

पाणिपात्र-धर्मोपदेश करि भव-सागरतैं भविजन तारै,
तीर्थंकरपद दायक भावन षोडश चित्त विषै विस्तारे।
ग्रंथ त्यागि तप करें दुवादश, दशलक्षण मुनि धर्म संभारे,
पंच महाव्रत धारत तिन पद, शीश नायके मस्तक धारैं ॥१॥

(चाल–बाजा बाजिया भला)

जयशील महा नग धर नमों मुनि, पंचेन्द्रिय संयम योग संयुक्त।
चरणां लागिहों भला, मोहि त्यारोजी ऋषि दीनदयाल ॥१॥
ग्यारह अंग धारक नमों मुनी, पुनि चौदहजी पूरब के धार ॥च०॥२॥
कोष्ठ–बुद्धिधर नमों मुनी, पादानुसार अकाश विहार ॥च०॥३॥
पाणाहारी हू नमों मुनी, धरैं वृक्षमूल आतापन योग ॥च०॥४॥
जे मौन धार स्थित अहारले मुनी, जाण्या राजरंकगृह सब इकसार ॥च०॥५॥
जय पंचमहाव्रतधर नमों मुनी, जे समिति गुप्ति पालक बरवीर ॥च०॥६॥
जे देह माहिं विरक्त नमों मुनी, ते राग रोष भय मोह हरंत ॥च०॥७॥
लोभ रहित संवर धरै मुनी, दुखकारीजी नास्यो काम रु क्रोध ॥च०॥८॥
स्वेद मैलतें लिप्त हैं मुनी, आरम्भ परिग्रहतें विरक्त ॥च०॥९॥
षट् आवश्यक धर नमों मुनी, द्वादशतप धर तन वे सोखँत ॥च०॥१०॥
एक ग्रास दोय लेत हैं मुनी, वे नीरस भोजन करत अनिंद ॥च०॥११॥
स्थिति मसान करते नमों मुनी, जो कर्म डहर सोखरकों दिनंद ॥च०॥१२॥
द्वादश संयम धर नमों मुनी, जो विकथा च्यार करी परिहार ॥च०॥१३॥
दो बीस परीषह सह नमों मुनी, संसार महार्णवतें उतरंत ॥च०॥१४॥
जय धर्मबुद्धि थुति नृप कर मुनि जो काउसग्गा करि रात्रि गमंत ॥च०॥१५॥

सिद्धि-रमा-वर वे नमों मुनी, जे पक्ष मास अहार करंत।
चरणां लागिहों भला, मोहि त्यारोजी ऋषि दीनदयाल ॥१६॥
गोदोहन वीरासन धरैं मुनी, सेज धनुष वज्रासन धार ॥च०॥१७॥
तप बल नभ विहरत नमों मुनी, वे गिरि कंदर करत निवास ॥च०॥१८॥
शत्रु मित्र समचित धरै मुनी, मैं बंदों दिढ चारित्रके धार ॥च०॥१९॥
धर्म शुक्ल ध्यावैं ध्यानकूं मुनी, मैं बंदों यतिवर मोक्ष गमंत ॥च०॥२०॥
चौबीस परिग्रहच्युत नमों मुनी, ध्यावों मुनिवर जगत पवित्त ॥च०॥२१॥
रत्नत्रय करि शुद्ध हैं मुनी, तिनको मैं बंदों शुद्ध कर चित्त ॥च०॥२२॥
मुनिगुण पार न पाइयो सुरा, मैं तुच्छ बुद्धि किम कहोजी बखान ॥च०॥२२॥
बारबार विनती करूं मैं तुम्हें, करुणानिधि मोकूं करि निजदास ॥च०॥२३॥
भविजन जो मुनि गुण धरें मनां, पद पूजत श्रीगुरु बारंबार ॥च०॥२५॥
मुनिस्वरूप को ध्याके मनां, वह उतरैजी भव-दधि पार ॥च०॥२६॥

(कवित्त छन्द)

जे तपसूरा संयम धीरा मुक्तिवधू अनुरागी,
रत्नत्रय-मण्डित कर्म-विहंडित ते ऋषिवर बडभागी।
सूरि उपाध्याय सर्वसाधु त्रय पद धारत सब त्यागी,
पूज करत हौं भक्ति भावतैं निज स्वरूप लवलागी ॥२७॥

ॐ ह्रीं आचार्य उपाध्याय सर्वसाधु त्रयपद धारक अतीत अनागत वर्तमानकाल सम्बन्धित सर्वमुनीश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जे या पूजा करै करावै सुर धरि गावै।
अति उछाह करि जिनमन्दिर में मंडल मंडावे।
देखै अरु अनुमोद करै जो भव्य निरन्तर,
तिनके घरतें सर्व विघन भय नशैं दुरन्तर॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

(दोहा)

संवत शत उनवीस दश, श्रावण सप्तमि श्वेत।
सरूपचन्द मुनि-भक्तिवश, रची स्वपर हित हेत॥

इति चौसठ ऋद्धि पूजा
(बृहत् गुर्वावलि पूजा शांति विधान) सम्पूर्ण

यह स्वर्णपुरी अति पावन है,
मंगल मंगल मंगलकर है,
यह मुक्तिमार्ग प्रकाशक है,
स्वानुभूति तीर्थ अति मंगल है.

अध्यात्म अतिशयक्षेत्र श्री सुवर्णपुरी तीर्थधाम